अंक : १४५

जनवरी-मार्च २०१९

कथाबिंब

कथाप्रधान त्रैमासिक पत्रिका

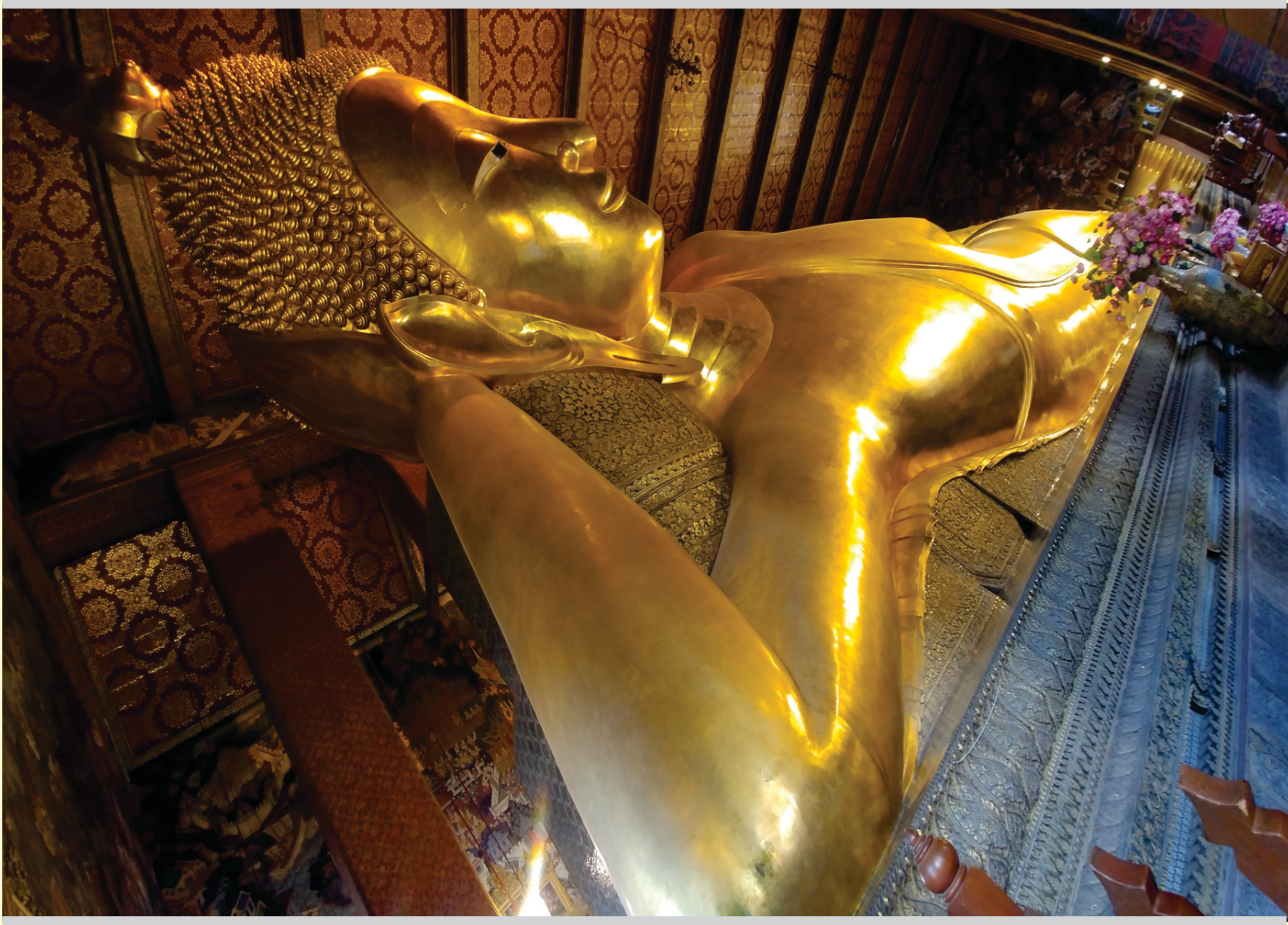

कहानियां

• एम. जोशी हिमानी • अरुण अर्णव खरे • संदीप शर्मा
गोविंद उपाध्याय • प्रशांत पांडेय • राजेश जैन

आमने-सामने

अजीत श्रीवास्तव

सागर-सीपी

डॉ. सूर्यभानु गुप्त

२० रुपये

T.A. CORPORATION

8, Dewan Niketan, Chembur Naka, Chembur, Mumbai - 400 071.

Ph. : (off): + 91-22-25223613 / 67974515 / 6596 1234

Fax : + 91-22-25223631 • Email : tac@vsnl.com

• Website : www.chemicalsandinstruments.com

★ Offers ★

- H.P.L.C. GRADE CHEMICALS
- SCINTILLATION GRADE CHEMICALS
- GR GRADE CHEMICALS
- BIOCHEMICALS
- STANDARD SOLUTIONS
- HIGH PURITY CHEMICALS
- ELECTRONIC GRADE CHEMICALS
- LR GRADE CHEMICALS
- INDICATORS
- LABORATORY INSTRUMENTS

Manufactured by :

PRABHAT CHEMICALS

C1B, 1909, G.I.D.C., Panoli, Dist. Bharuch, Gujarat,

Ph.: 02646-272332

email: response@prabhatchemicals.com

website : www.prabhatchemicals.com

Stockist of:

- Sigma, aldrich, Fluka, Alfa, (U.S.A.)
- Riedel (Switzerland)
- Merch (GDR)
- Lancaster (UK)
- Strem (UK)

जनवरी-मार्च २०१९
(१९७९ से प्रकाशित)

कथाबिंब

कहानियां

।। ७ ।। अधूरी कहानी – एम. जोशी हिमानी
।। १३।। दूसरा राज महर्षि – अरुण अर्णव खरे
।। १७।। गाइड – संदीप शर्मा
।। २५।। धुंध छटने के बाद – गोविंद उपाध्याय
।। २९।। जश्न – प्रशांत पांडेय
।। ३२।। उपचार – राजेश जैन

लघुकथाएं

।। १६।। मां / आनंद बिल्थरे
।। ३१।। सामाजिक दायित्व / मार्टिन जॉन
।। ३६।। मज़हब / पारस कुंज
।। ५५।। छोटी सी चिड़िया / गोवर्धन यादव

कविताएं / ग़ज़लें

।। १२।। कविता /मधु प्रसाद
।। ३४।। ग़ज़ल / राजेंद्र निशेश
।। ४०।। ग़ज़ल / हम्माद खान
।। ४२।। तादात्म्य (कविता) / मृत्युंजय उपाध्याय

स्तंभ

।। २ ।। "कुछ कही, कुछ अनकही"
।। ४ ।। लेटर बॉक्स
।। ३७।। "आमने-सामने" / अजीत श्रीवास्तव
।। ४२।। "सागर-सीपी" / डॉ. सूर्यभानु गुप्त
।। ५०।। "औरतनामा" : भगिनी निवेदिता / डॉ. राजम पिल्लै
।। ५३।। पुस्तक-समीक्षा

प्रधान संपादक
डॉ. माधव सक्सेना "अरविंद"

संपादिका
मंजुश्री

संपादन सहयोग
डॉ. राजम पिल्लै
जय प्रकाश त्रिपाठी
अशोक वशिष्ठ
अश्विनी कुमार मिश्र

संपादन-संचालन पूर्णतः
अवैतनिक तथा अव्यवसायिक

●सदस्यता शुल्क●
आजीवन : ७५० रु., **त्रैवार्षिक** : २०० रु.,
वार्षिक : ७५ रु.,

कृपया सदस्यता शुल्क
मनीऑर्डर, चैक द्वारा
केवल "**कथाबिंब**" के नाम ही भेजें.

●रचनाएं व शुल्क भेजने का पता●
ए-१० बसेरा, ऑफ दिन-क्वारी रोड,
देवनार, मुंबई-४०० ०८८.
मो.: ९८१९१६२६४८, ९८१९१६२९४९

e-mail : kathabimb@gmail.com
www.kathabimb.com

● **न्यूयॉर्क संपर्क** ●
नरेश मित्तल
(M) 845-304-2414
● **कैलीफ़ोर्निया संपर्क** ●
तूलिका सक्सेना
(M) 224-875-0738
नमित सक्सेना
(M) 347-514-4222

एक प्रति का मूल्य : २० रु.
कृपया नमूने की प्रति मंगाने हेतु
२० रु. के डाक टिकट अवश्य भेजें.
(सामान्य अंक : ४४-४८ पृष्ठ)

●"कथाबिंब" अब फ़ेसबुक पर भी ●
facebook.com/kathabimb
आवरण पर नामित रचनाकारों से निवेदन है कि वे कृपया अपने नाम को "टैग" करें.

आवरण चित्र : स्लीपिंग बुद्धा (बैंकॉक), १० मार्च २०१९.
फ़ोटो : नमित सक्सेना.

"कथाबिंब" मुंबई की "संस्कृति संरक्षण संस्था" के सौजन्य से प्रकाशित होती है.

कुछ कही, कुछ अनकही

समय के साथ हर क्षेत्र में बदलाव आता है. परिवर्तन ही शाश्वत सत्य है. एक समय था जब हिंदी साहित्य के पाठकों का पूरी तरह अभाव महसूस होने लगा था. बड़ी–बड़ी पत्रिकाएं बंद हो रही थीं. यह शायद ८०–९० का दौर था. लेकिन २१वीं सदी के आते–आते स्थिति बदलने लगी. कंप्यूटर सस्ते होने लगे और आकार में छोटे होते गये, डेस्कटॉप लैपटॉप में बदल गया और आज पूरा कंप्यूटर स्मार्टफ़ोन में समा गया है. वाई–फ़ाई भी सर्वसुलभ हो गया है. भाषा की भी समस्या नहीं रह गयी. एक जरा से क्लिक से आप अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी या अन्य किसी भाषा में टाइप कर सकते हैं. ई–पत्रिकाओं की भी भरमार है. लेखक, पाठक के लिए अंतहीन विकल्प उपस्थित हैं.

इस बार *"कमलेश्वर-स्मृति कथाबिंब कथा पुरस्कार-२०१८"* के पुरस्कारों की घोषणा पृष्ठ ६ पर प्रकाशित की गयी है. सभी पुरस्कार विजेताओं को बधाई. प्रशस्ति–पत्र के साथ पुरस्कार की राशि चैक द्वारा शीघ्र भेजी जायेगी.

•

अब इस अंक की कहानियों की एक झलक : एम. जोशी हिमानी की *"एक अधूरी कहानी"* अंक की पहली कहानी है. देश के एक बड़े वर्ग के बच्चे आज विदेशों में नौकरियां कर रहे हैं. ऐसे ही एक परिवार में छः महीने के टूरिस्ट वीसा पर मां भी ब्रिटेन आयी हुई है. मां के साथ रहने पर बेटे–बहू को कुछ समय के लिए ही काफ़ी आराम है. अपने अकेलेपन को कम करने की दृष्टि से मां आशा रोज़ एक पार्क में घूमने जाती है जहां उसकी पहचान पाकिस्तान से आये प्रवासी साहिल से होती है. मगर कहानी आगे नहीं बढ़ पाती और बीच में ही अधूरी रह जाती है, क्योंकि वीसा की समाप्ति पर आशा को भारत लौटना ज़रूरी है. अगली कहानी *"दूसरा राज महर्षी"* (अरुण अर्णव खरे) की अनुरीता चाहती है कि उसका पुत्र शौर्य आई. आई. टी. में टॉप करे. मां के स्वप्न को पूरा करने के लिए शौर्य जी–जान से प्रयास भी करता है लेकिन इस सब में वह अपने दोस्तों से अलग–थलग पड़ जाता है. अंततः पढ़ाई के दबाव के कारण वह बीमार पड़ जाता है. इस तरह का "पियर प्रेशर" कभी–कभी विद्यार्थियों के लिए काफ़ी परेशानी का कारण बन सकता है. तीसरी कहानी *"गाइड"* के लेखक संदीप शर्मा जी भी पहली दोनों कहानियों के रचनाकारों की तरह "कथाबिंब" के पाठकों के लिए नये ही हैं. हिमालय में ट्रैकिंग के लिए स्पेन से पर्यटकों का एक दल आता है. साथ में कुछ स्थानीय गाइड भी हो लेते हैं. सबको १७,००० फ़ुट की मून पीक पर पहुंचना है. चट्टान से फिसल कर दल की एक सदस्या मर्सीडीज़ को चोट लग जाती है. न चाहते हुए भी गाइड कमल के मित्र दीपक को उसकी मदद करनी पड़ती है. दीपक पहले गाइड ही था किंतु उसने बाद में यह काम छोड़ दिया था, उसने महसूस किया कि अधिक पर्यटकों के आने के कारण पहाड़ों का नैसर्गिक स्वरूप बदलने लगा है. अगली कहानी *"धुंध छटने के बाद"* के लेखक गोविंद उपाध्याय की कई कहानियां पाठक पहले पढ़ चुके हैं. मानसी और भास्कर एक ही कंपनी में काम करते थे. उनके डिपार्टमेंट अलग–अलग थे फिर भी उनमें मित्रता हो गयी और वे साथ–साथ रहने लगे. आगे चलकर उनके शारीरिक संबंध भी स्थापित हुए. किंतु भास्कर ने कभी कोई कमिटमेंट नहीं किया था. मां के दबाव के कारण मानसी ने बाद में दीपेन से विवाह कर लिया. सब कुछ ठीक चल रहा था कि एक दिन, एक फ़ोन ने मानसी के जीवन में जहर घोल दिया. मानसी का अतीत उसके सामने आ खड़ा हुआ. कोई उसे ब्लैकमेल कर रहा था. अंक की पांचवी कहानी *"जश्न"* (प्रशांत पांडेय) एकदम अलग तेवर की कहानी है. सामान्यतः मां–बाप लड़के के पास होने पर जश्न मनाते हैं. आनंद दूसरी बार फेल हो गया था और घर जाने से पहले इधर–उधर घूमता रहा. लेकिन घर पहुंचा तो नज़ारा ही और था. पिता ने उसके गले में माला डाली और कहा कि पिछले साल मैंने तुझे बेकार ही मारा, मैं ही कौन बहुत पढ़ा–लिखा हूं. फेल होने के बाद भी घर पर जश्न का माहौल था. "गिफ़्ट" के रूप में एक्टिवा भी खड़ी थी. अंक की अंतिम कहानी *"उपचार"* के सिद्धहस्त लेखक राजेश जैन विद्युत इंजीनियर हैं. कहानी के नायक बंसल साहब का काम विद्युत ऊर्जा की ग्रिड के उतार–चढ़ाव का "उपचार" करना या नियंत्रण करना है, वे लोड डिस्पैच प्रभारी हैं. माना जाता है कि उनके पास जादू की छड़ी है जिसके एक इशारे पर शहर के शहर जगमगा उठते हैं या अंधेरे में डूब जाते हैं. लेकिन पत्नी सोनाली के आगे उनकी एक नहीं चलती. सोनाली अपने ढंग से लोगों का "उपचार" करती रहती है, बंसल साहब का उस पर कोई नियंत्रण नहीं है.

•

एक बार फिर चुनावी शतरंज की बिसात बिछ गयी है. अप्रैल–मई में ७ चरणों में होने वाले लोक सभा के चुनाव की तारीख़ें घोषित हो गयी हैं. अप्रैल में चार चरण और शेष तीन चरण मई में संपन्न होंगे. पूरे देश में सरगर्मी है. गठबंधन, महा–गठबंधन ताबड़–तोड़ बन रहे हैं और टूट रहे हैं. दिल्ली में "आप" कॉन्ग्रेस के दरवाज़े गुहार लगा–लगाकर थक गयी पर शीला दीक्षित जी खार खाये बैठी रहीं. बुढ़ापे में कोई अपनी कितनी फ़जीहत कराए. गठबंधन हो तो मुश्किल और न हो तो भी मुश्किल. इधर कुआं उधर खाई! ख़बर गर्म है कि केजरीवाल राहुल बाबा से मिलने गये तो युवराज ने हाथ भी नहीं मिलाया. याद करें, पिछले साल कर्नाटक विधान सभा में कॉन्ग्रेस और जनता दल (एस) ने मिलकर जब सरकार बनायी थी तब सभी विपक्षी दलों के नेताओं ने एक–दूसरे का हाथ पकड़कर फ़ोटो खिंचायी थी, विपक्ष एकता ज़िंदाबाद के नारे लगे थे. मायावती, सोनिया, ममता, नायडू, केजरीवाल सब गले मिल रहे थे. आज सभी प्रांतों के समीकरण अलग हैं. सब अपने हितों को साध रहे हैं. उत्तर प्रदेश और बिहार की कुल सीटें परिणामों में हमेशा एक

निर्णायक भूमिका निभाती हैं. उ. प्र. में एक समय के धुर विरोधी बुआ–भतीजा साथ आ गये हैं. बुआ ने अपने ऊपर लखनऊ गेस्ट हॉउस में हुए जानलेवा हमले को भुला दिया है! बिहार में लालू की अनुपस्थिति में कमान तेजस्वी के हाथ में है. शायद रिमोट लालू जी के हाथ में ही हो! सुनने में आया है कि तेज प्रताप ने एक अलग मोर्चा बना लिया है. बंटवारे में गिनती की ८ सीटें कॉन्ग्रेस को मिल सकी हैं. कर्नाटक, मध्य प्रदेश और संभवत: पंजाब को छोड़कर किसी भी अन्य राज्य में कॉन्ग्रेस प्रमुख भूमिका में नहीं है. प्रधानमंत्री पद के रूप में सिवाय एक स्टालिन को छोड़कर किसी को राहुल गांधी स्वीकार नहीं हैं. पूर्वी उत्तर प्रदेश में बहन प्रियंका गांधी को चुनाव का प्रभारी बनाकर बात नहीं बन रही है. अमेठी में आसन्न हार के डर के कारण केरल की एक "सुरक्षित" सीट वायानद से भी राहुल बाबा पर्चा दाख़िल करेंगे. कहा यह जा रहा है कि दक्षिण भारत के तीन प्रांतों के लोग चाहते थे कि लोकप्रिय युवराज उनके राज्य से चुनाव लड़ें! वैसे यह बात आसानी से पच नहीं पा रही. यह कोई नयी बात नहीं है. नरेंद्र मोदी, मुलायम सिंह, अटल बिहारी बाजपेयी, इंदिरा गांधी, सोनिया गांधी ने भी दो–दो सीटों से चुनाव लड़ा था.

पांच साल पहले हुए लोकसभा के चुनाव में मुख्य मुद्दा भ्रष्टाचार था. दस वर्ष के कॉन्ग्रेस के राज्य से जनता त्रस्त थी. कॉमनवेल्थ गेम, २ ज़ी, कोयला घोटाला और इस सबके साथ में, अन्ना हज़ारे ने भ्रष्टाचार के विरोध में अपना मोर्चा खोल रखा था. लोकपाल और लोकायुक्त की मांग को लेकर वे दिल्ली के रामलीला मैदान में अनशन पर जा बैठे. लोग एक बदलाव चाहते थे. ऐसे में संभावित प्रधानमंत्री के रूप में नरेंद्र मोदी के रूप में स्वच्छ छवि वाले एक नये चेहरे का प्रादुर्भाव हुआ. उन दिनों हर कोई गुजरात मॉडेल की बात करता था. युवाओं ने, हर जाति और वर्ग के लोगों ने मोदी को बढ़–चढ़ कर वोट दिया. देश के अनेक वामपंथी संगठनों और बुद्धिजीवियों ने जी–जान से कोशिश की कि मोदी हार जायें. किंतु हुआ इसका उल्टा, ३०सालों में पहली बार बहुमत वाली सरकार बनी.

इस बार चुनौती अधिक बड़ी है. विरोधी सोचते हैं कि यदि मोदी फिरसे आ जाते हैं तो किसी को भी कोई "स्पेस" नहीं मिलेगी. विपक्ष के दलों का एक ही मुद्दा है मोदी विरोध. हर प्रांत के जातीय समीकरण भिन्न हैं, अलग–अलग नेता हैं. देश की बागडोर राहुल गांधी को देने के लिए कोई भी दल तैयार नहीं है.

मार्च के अंत में, *"आर्टिस्ट्स यूनाइट इंडिया"* नाम के कलाकारों के एक अनौपचारिक ग्रुप ने अपनी वेबसाइट पर एक अपील ज़ारी की है कि लोग चुनाव में भाजपा के उम्मीदवारों को वोट न दें. ग्रुप का दावा है कि इसके सदस्य देश में सब कहीं है. पिछले कई सालों से अलग–अलग शहरों में ग्रुप कार्यक्रम करता रहा है. अपील में १०० फ़िल्म निर्देशकों के हस्ताक्षर हैं. कुछ नाम हैं : आनंद पटवर्धन, बीना पॉल, देवाशीष मखीजा, गुरविंदर सिंह. "एस. दुर्गा" फ़िल्म के मलयाली निर्देशक ससीधरन इस ड्राफ़्ट बनाने के पीछे हैं. उनके अनुसार वर्तमान सत्ता यदि दोबारा आती है तो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हट जायेगी, लोकतंत्र समाप्त हो जायेगा और संविधान नष्ट हो जायेगा. २०१४ में भी यही लोग पीछे पड़े थे किंतु इनकी दाल नहीं गली. इस बार तो बहुत से "बुद्धिजीवियों" ने हस्ताक्षर करने से भी मना कर दिया. ऐसे और इसी तरह के तथाकथित "आयवरी टॉवर" पर बैठे बुद्धिजीवियों की समस्या यह है कि वे धरातल की सच्चाई से बहुत दूर रहते हैं. मैं ऐसे ही सब लोगों और कॉन्ग्रेस के युवा अध्यक्ष राहुल गांधी जो प्रधानमंत्री के "सिंहासन" पर बैठने के लिए लालायित हैं जानना चाहता हूं कि देश की तमाम जटिल समस्याओं से पार पाने का आपके पास क्या तरीक़ा है ? अधिकांश समस्याएं कॉन्ग्रेस की देन हैं. बेरोज़गारी और ग़रीबी क्या पिछले पांच सालों में पैदा हो गयीं? १९७१ में इंदिरा गांधी ने ग़रीबी हटाने का नारा दिया था. एक बार फिर कॉन्ग्रेस ग़रीबी हटाने की बात कर रही है. किसानों की कर्ज़ माफ़ी भी एक झलावा है. जो किसान आत्महत्या करते हैं वे बैंक से ऋण नहीं लेते. बैंक तक तो बहुत कम किसानों की पहुंच होती है. परिस्थितिवश विवश हो स्थानीय साहूकारों से पठानी दर पर किसानों को कर्ज़ लेना पड़ता है. अनेक बार यह कर्ज़ चुकाना संभव ही नहीं होता. लोगों को सालाना ६,००० या ७२,००० रु. देने से भी किसी का भला नहीं होने वाला. यह पैसा कहां से आयेगा? अगर बिना काम किये, घर बैठे पैसा मिलेगा तो कोई काम क्यों करेगा. इन सारी समस्याओं से निपटने का एक ही उपाय है कि हर क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाया जाये, विकास की गति में सत्वरता लायी जाये.

२१ वीं सदी के दूसरे दशक के अंत में होने वाला लोक सभा का यह चुनाव पहले के सभी चुनावों से एकदम भिन्न है. इसमें एक नया आयाम जुड़ गया है जो पहले कभी नहीं था. पहले कभी ट्वीटर, फ़ेसबुक, यू–ट्यूब, वाट्सएप का उपयोग प्रचार के लिए नहीं किया जाता था. इन सब माध्यमों के उपयोग से क्षणांश में करोड़ों मतदाताओं के पास हर तरह की "सूचना" पहुंचाई जा सकती है. यह पता करना मुश्किल है कि इसमें क्या "फ़ेक" है या क्या सच. यदि वीडियो है तो यह पता नहीं लग सकता कि वह कब और कहां रिकॉर्ड किया गया. स्मार्ट फ़ोन रखने वाला हर व्यक्ति झट से कुछ भी यू–ट्यूब पर या टी. वी.चैनलों पर अपलोड कर देता है. अभी हाल ही में फ़ेसबुक ने कॉन्ग्रेस के ७०० से अधिक फ़र्ज़ी एकॉउंट बंद किये.

●

कश्मीर में निरंतर पाकिस्तान की ओर से घुसपैठ ज़ारी है. फुलवाना में १४ फरवरी २०१९ को हमारे ४० जवान शहीद हुए. सारे देश में चारों ओर बहुत ज़बरदस्त आक्रोश छाया हुआ था. प्रधानमंत्री ने सेना को खुली छूट दी कि समय और स्थान चुनकर इसका बदला ले. दस दिन के अंदर पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के बालाकोट में सर्जिकल स्ट्राइक हुआ जिसमें दो सौ से तीन सौ आतंकवादी मारे गये. लेकिन विरोधी दल इस पर भी प्रश्नचिन्ह उठाने से नहीं चूके. देश में कुछ लोग हैं जो आज तक स्वीकार नहीं कर पाये हैं कि श्री नरेंद्र मोदी भारत के चुने हुए प्रधानमंत्री हैं.

अरविंद

लेटर-बॉक्स

▸▸ 'कथाबिंब' का १४४ वां अंक मिला. हमेशा की तरह अंक सुंदर व पठनीय है. आवरण पर मनसा देवी मंदिर से लिया (हरिद्वार) गंगा का दृश्य बड़ा ही मनमोहक लगा. वैसे गंगा हमारे घर से बहुत दूर नहीं है. पत्रिका के हर अंक का आवरण पाठकों को नये स्थलों का दर्शन कराता है. 'कुछ कही, कुछ अनकही' में 'मी-टू' आंदोलन पर आपने सही लिखा है कि चपेट में तो बहुत सारी नामी-गिरामी हस्तियां आयीं पर लगता है यह आंदोलन भी कोर्ट-कचहरी की फ़ाइलों में दफ़न हो जायेगा. डॉ. सुधा ओम ढींगरा की कहानी 'ऐसा भी होता है' एक बहुत बड़ा सवाल सामने रखती है कि किस तरह पैसों के लालच में लोग अपनी बेटियों को विदेश सिर्फ़ इसलिए ब्याह देते हैं कि अपने घरवालों की ज़रूरतों को पूरा करती रहें. पंजाब में यह आम बात है. 'भजनिया बॉस' (हरी प्रकाश राठी) मन को छू गयी. पीढ़ियों से चली आ रही दुश्मनी समाप्त करने के लिए बस यही काफ़ी था... 'जग में सुंदर हैं दो नाम, चाहे राम कहो या श्याम.. राम, राम, राम!' एक दूसरे को नीचा दिखाने से कभी पीछे न हटने वाले प्रतिद्वंद्वी राम भजनियों और श्याम भजनियों के मन की कोमल भावनाएं बाहर आ ही जाती हैं. इस बहुत सुंदर कहानी ने विशेष रूप से प्रभावित किया.

सुरभि बेहरा की 'बुझती आंखों की उम्मीद' मानसिक रूप से बीमार एक ऐसी औरत की कहानी है जो अपने हाथों से अपना घर-संसार उजाड़ लेती है, और अंत में अपने आपको मार लेती है.

अमिता नीरव की कहानी 'झरता हुआ मौन' पुरुष वर्ग की मानसिकता को दर्शाती है. स्त्री की इच्छाओं-आकांक्षाओं को पुरुष द्वारा नज़रअंदाज करना कैसे उसे कुंठित बना देता है और धीरे-धीरे वह अपना अस्तित्व ही भूलने लगती है. सुशांत सुप्रिय की कविताओं ने विशेष प्रभावित किया.

'सागर-सीपी' में डॉ. गोयनका जी का साक्षात्कार पढ़कर उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय प्राप्त हुआ. 'औरतनामा' स्तंभ द्वारा हर बार एक कर्मठ और प्रतिष्ठित महिला से परिचय कराने के लिए डॉ. राजम पिल्लै जी को धन्यवाद.

– श्रीमती तृप्ति शर्मा,

२०२ संत रामचंद्र भवन, कनखल, हरिद्वार-२४९४०८, (उ. खं.)

▸▸ लंबे अंतराल से 'कथाबिंब' से जुड़ा हूं. भाई अरविंद पत्रिका नियमित भिजवाते हैं, यह मेरा सौभाग्य है. आम आदमी की ज़िंदगी से जुड़ी मेरी कहानियां भी ससम्मान प्रकाशित करते हैं. 'कथाबिंब' आज की पत्रिकाओं में सिर उठा कर चल रही है, जिसके पीछे भाई अरविंद जी का अथक परिश्रम झलकता है. इंटरनेट से पत्रिका देखी तो समस्त सामग्री रंगीन पृष्ठों पर उकेरी हुई दिखी, दिल पुलकित हो उठा. काश.. हर अंक ऐसे ही छपे.. प्रस्तुत अंक में 'आमने-सामने' के कमलेश भारतीय की अंतरंग ज़िंदगी की अनेक जानकारियां मिलीं, वे मेरे मित्र हैं और हमने लगभग एक ही समय में लिखना प्रारंभ किया था. कहानियों में आज के यथार्थ के अनेक अध्याय खुलते हुए प्रतीत हुए. कथाकार डॉ. सुधा ओम ढींगरा, हरी प्रकाश राठी, सुरभि बेहरा तथा अमिता नीरव की कहानियां मन को छूती हैं. डॉ. कमल किशोर गोयनकाजी का साक्षात्कार इस अंक की उपलब्धि है, मैंने पहली बार उनके निजी जीवन को क़रीब से जाना. इसके लिए डॉ. पुष्पा सक्सेना बधाई की पात्र हैं. अन्य सामग्री भी स्तरीय है. ग़ज़लें भीतर तक नहीं उतर पायीं. कविताएं-लघुकथाएं प्रभावित करती हैं. पत्रिका में दिनोंदिन निखार आ रहा है, मेरी बधाई लें. आप परिश्रम से इस पुनीत

कार्य में जुटे हैं, निस्संदेह यह प्रशंसनीय है.

'कमलेश्वर-स्मृति कथाबिंब कथा पुरस्कार' के माध्यम से आप कमलेश्वरजी को स्मरण कर लेते हैं, यह भी उस पुनीत महायज्ञ में एक आहुति ही तो है. आज सच ही इस तरह के आयोजन साहित्यकारों को प्रोत्साहित करते हैं.

अंत में मेरी कहानी 'कोई भी नहीं' के प्रकाशन हेतु 'कथाबिंब' परिवार का भीतरी मन से आभारी हूं. जिसके माध्यम से मैं देशभर के पाठकों से जुड़ता हूं. 'कथाबिंब' के सुनहरे भविष्य की अनेक मंगल कामनाएं करता हूं.

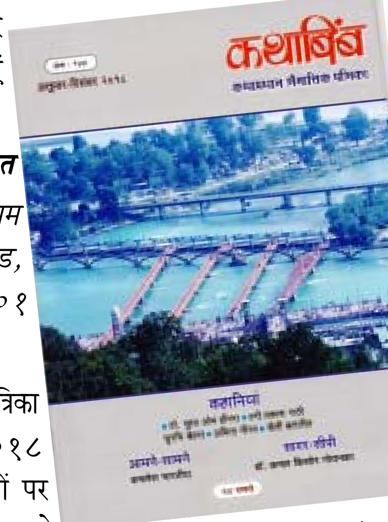

– सैली बलजीत

१२८८, लेन-४, श्रीराम शरण् कॉलोनी, डलहौज़ी रोड, पठानकोट (पंजाब)-१४५००१

मो. ६२८०६८३६६३

▸▸ कथा प्रधान त्रैमासिक पत्रिका 'कथाबिंब' का अक्तूबर-दिसंबर २०१८ प्राप्त हुआ है जो सदैव ऊंचाइयों पर पहुंचती जा रही है. सदैव अपने कथाप्रधान होने की सार्थकता की कसौटी पर खरी उतरती है.

प्रथम कहानी 'ऐसा भी होता है' डॉ. सुधा ओम ढींगरा की है जो एक प्रतिष्ठित तथा स्थापित प्रवासी कथाकारा हैं. यह कहानी वर्तमान समय में बेटा-बेटी के भेद पर करारी चोट है. बाक़ी अन्य सभी कहानियां अच्छी हैं, स्तरीय हैं. कविता में गाय-गाय (सतीश राठी), सुशांत सुप्रिय की कविताएं सम–सामयिक हैं. स्थायी स्तंभों की प्रविष्टियां श्रेष्ठ हैं. कुशल संपादन के लिए संपादक मंडल के सदस्य बधाई के पात्र हैं.

– एम. डी. मिश्रा 'आनंद'

आनंद भवन, पृथ्वीपुर, जिला-निबाडी (म. प्र.), मो. ९४२४३४५३५५.

▸▸ यूं तो 'कथाबिंब' कथाप्रधान पत्रिका है और इसकी मुख्य धारा में कहानियां ही होती हैं. इस त्रैमासिक पत्रिका में अन्य संतुलित कथेतर सामग्री को समाहित करके सुरुचिपूर्ण कलेवर देने में संपादकीय कौशल प्रशंसनीय है.

'कथाबिंब' के नवीनतम अंक १४४ में कहानियों का चयन तो पूर्व की तरह उत्तम है ही और अन्य रोचक कथेतर सामग्री को भी सुनियोजित ढंग से प्रस्तुत किया गया है. 'सागर-सीपी' में डॉ. पुष्पा सक्सेना ने डॉ. कमल किशोर गोयनका से बातचीत करके जिज्ञासु पाठकों को पूर्ण संतुष्ट किया है. पाठक जो जानना चाहते हैं, वे बातें ही गोयनका जी से कहलवा दीं. यह साक्षात्कारकर्ता का कौशल ही है. 'आमने-सामने' में कमलेश भारतीय ने अपने को पर्त-दर-पर्त खोलते हुए बड़े रोचक ढंग से पाठकों की जिज्ञासा शांत की है. 'औरतनामा' में डॉ. राजम पिल्लै का आलेख 'भारत-कोकिला' : सरोजिनी नायडू की प्रस्तुति बहुत अच्छी है. आश्‍चर्यचकित तो करता ही है और अति ज्ञानवर्धक भी है.

हमेशा की तरह 'कुछ कही, कुछ अनकही' सारगर्भित व सटीक है. 'लेटर-बॉक्स' तथा 'पुस्तक-समीक्षा' में स्तरीय सामग्री है. अपने तेवरों के साथ कविताएं, ग़ज़लें, मुक्तक हैं. उत्कृष्ट पठनीय व आकर्षक कलेवर के लिए आपको साधुवाद!

-बृज मोहन

'मनोरम', ३५, कछियाना, पुलिया नं. ९, झांसी २८४००३ मो. ९४१५६१४५५२

▸▸ 'कथाबिंब' का अक्तूबर-दिसंबर '१८ अंक मिला. सबसे पहले 'कुछ कही-कुछ अनकही' पढ़ी. आपने कई राजनैतिक-सामाजिक विषयों को उठाया है जिन पर लंबी बहस हो सकती है. गागर में सागर भरने का काम किया है. रोज़-रोज़ होने वाले बंद, प्रदर्शनों

और कोर्ट-कचहरी में वर्षों लंबित मुकदमों ने आम आदमी का विश्वास हिला दिया है. इस अंक की सभी कहानियां अच्छी हैं. 'भजनिया बॉस' बहुत श्रेष्ठ कहानी है. ठाकुर साहब ने कैसे स्थिति को संभाला और अंत में दोनों भजनिए वर्षों की दुश्मनी भूल गये. डॉ. सुधा ओम ढींगरा ने 'ऐसा भी होता है' में अपने मायके वालों की पैसों की मांग को पूरा करने के लिए विदेशों में ब्याही जाने वाली लड़कियों की पीड़ा को बख़ूबी दर्शाया है. 'बुझती आंखों की उम्मीद', 'झरता हुआ मौन' कहानियां स्त्री के मनोभावों को व्यक्त करती हैं. 'कोई भी नहीं...' कहानी सामान्य लोगों की मानसिकता को दिखाती है. अपनी आंखों के सामने और अपने चारों ओर घटती घटनाओं से तटस्थ रहने में ही सामान्य आदमी अपनी भलाई समझता है. पुलिस के चक्कर से बचने के लिए आंख मूंद लेने में ही भलाई है.

'औरतनामा' और 'सागर-सीपी' स्तंभ भी बहुत प्रभावी रहे. सुशांत 'सुप्रिय' की 'कल रात सपने में' बहुत अच्छी कविता है. लेटर-बॉक्स में एक बिंदास प्रतिक्रिया, सविता मनचंदा द्वारा वाकई 'एक बिंदास प्रतिक्रिया' है. उन्होंने काफ़ी विस्तार से प्रतिक्रिया दी है, साधुवाद!

– *मालती सिन्हा,*

पर्णकुटी, १/११, म. गां. मार्ग, संगमनेर (महा.)

▸▸ अरविंद जी 'कथाबिंब' में गुणवत्ता युक्त रचनाओं का चयन कर, पौधों में संपादन की सिंचाई कर सकारात्मकता की खाद डालने के साथ नकारात्मकता के कीड़ों से बचाने की सावधानी रखकर प्रकाशित रचनाओं से पाठक के मस्तिष्क को सुगंधित ऊर्जा से महकते पुष्प एवं समाधान प्रस्तुत करने वाले मिठास से छलकते फल प्राप्त होते हैं. यही गुण पत्रिका की सफलता एवं सार्थकता का साक्षात प्रमाण है. साधुवाद.

- *दिलीप भाटिया,*

३७२/२०१, न्यू मार्केट, रावतभाटा-३२३३०७. मो. : ९४६१५९१४९८.

"कमलेश्वर स्मृति कथा पुरस्कार-२०१८"

*"**कथाबिंब**" के प्रकाशन का यह ४० वां वर्ष है. एक अभिनव प्रयोग के तहत प्रतिवर्ष पत्रिका में प्रकाशित कहानियों को पुरस्कृत करने का उपक्रम हमने प्रारंभ किया हुआ है. पाठकों के अभिमतों के आधार पर वर्ष २०१८ के "कथाबिंब" के अंकों में प्रकाशित कहानियों का श्रेष्ठता क्रम निम्नवत रहा. सभी पुरस्कार विजेताओं को बधाई! विजेता यदि चाहें तो इस राशि में से या तो वे स्वयं "**कथाबिंब**" की आजीवन या त्रैवार्षिक सदस्यता ग्रहण कर सकते हैं अथवा अपने किसी मित्र/परिचित को सदस्यता भेंट कर सकते हैं. कृपया इस संदर्भ में शीघ्र सूचित करें. हम अत्यंत आभारी होंगे.*

: सर्वश्रेष्ठ कहानी (१५०० रु.) :

● **ऐसा भी होता है** - डॉ. सुधा ओम ढींगरा

: श्रेष्ठ कहानी (१००० रु.) :

● **भजनिया बॉस** - हरी प्रकाश राठी ● **नदी और मैं** - डॉ. रमाकांत शर्मा

: उत्तम कहानी (७५० रु.) :

● **रुतबा** - डॉ. हंसा दीप ● **बुझती आंखों की उम्मीद** - सुरभि बेहरा

● **झरता हुआ मौन** - अमिता नीरव ● **गुरू दक्षिणा** - मनोज कुमार "शिव"

● **नाही है कोई ठिकाना** - नीतू सुदीप्ति "नित्या"

अधूरी कहानी

एम. जोशी हिमानी

देश की विभिन्न नामचीन पत्र/पत्रिकाओं में समय-समय पर अनेक कहानियां प्रकाशित, कहानी संग्रह 'पिनड्रॉप साइलेंस' प्रकाशित, उपन्यास 'हंसा आयेगी ज़रूर' प्रकाशित, कविता संग्रह 'कसक' प्रकाशनाधीन.

बैकेट्स के मीलों फैले उस नेचर पार्क की खाली बेंच पर अकेले बैठी मैं पार्क की चारों दिशाओं में नज़र दौड़ाती हूं. चार दिन से मैं यही कर रही हूं परंतु वह कहीं नज़र नहीं आता. मैं आज एक बार फिर उदास हो उठी हूं, कहां ढूंढूं उसे? मैं ख़ुद से सवाल करने लगती हूं, कभी न उसका पता लिया न फ़ोन नंबर. वैसे इंडिया का मेरा नंबर यहां काम नहीं करता फिर भी व्हाट्सअप पर उससे जुड़ ही सकती थी. कितनी लापरवाह हूं मैं, अब परेशान हो रही हूं, वैसे नहीं जानती कौन है मेरा वह. किसी से जुड़ने के लिए कोई रिश्ता जोड़ना ज़रूरी नहीं होता है, किसी की वाइब्स अपनी ओर खींचती हैं और हम खिंचे चले जाते हैं. ऐसा ही मेरे साथ हुआ था. चार महीने पहले तक मैं अपने देश से हज़ारों मील दूर बैकेट्स के इस पार्क में तन्हा–सी घूमती थी. एक भी चेहरा यहां अपने देश का क्या एशिया का भी मुश्किल से दिखता था. तीखे नाक-नक्श वाले, बेहद लंबे, लाल-लाल नाक वाले गोरे ही यहां दिखते थे. वे भी अधिकतर रोमेनियन. पांच महीने पहले ही तो आयी थी मैं ब्रिटेन के इस अति सुंदर और ख़ूबसूरत टॉउन नार्थ हैंपटन में बेटे-बहू के पास. बेटे-बहू दिन भर ऑफ़िस में रहते और मैंने अपना समय बिताने के लिए इस पार्क को चुन लिया था. घंटों यहां बैठकर मैं पार्क के विशाल पेड़ों को निहारा करती, लंबे-लंबे हरी घास के मैदानों में चहलकदमी करती और दिन के सन्नाटे में यदि पार्क में एकाध बुज़ुर्ग या बच्चे दिख जाते तो उनको देखकर मुस्कुराया करती.

इस सुंदर यूरोपियन देश में आकर सीखा था मैंने अजनबियों को देखकर भी मुस्कुराना. हमारे यहां तो लोग अपनों को देखकर भी आंखें चुरा लेते हैं, अजनबियों को देखकर यदि कोई मुस्कुरायेगा तो वह इंसान बहुत ग़लत समझा जायेगा, यदि वह स्त्री हुई तो लोग पीछा करते हुए उसके घर तक पहुंच जायेंगे. उफ़ प्रेम ओर आनंद का मंत्र दूसरों को देने वाली संस्कृति के हम बाशिंदे कितनी ग़फलत में जीते हैं. अकेले उस बेंच पर बैठी मैं विचारों में खो जाती हूं.

कहीं वह बीमार तो नहीं होगा? या बिना बताये अपने देश तो नहीं लौट गया होगा? हो सकता है कोई विपदा आ गयी हो. एक दिन बातों-बातों में उसने बताया भी था पाकिस्तान में उसकी बीबी कुछ बीमार चल रही है. भले ही जीवनभर अपनी पत्नी के साथ उसके आत्मीय संबंध न रहे हों, फिर भी बीमारी, लाचारी की

हालत में उसकी देखभाल करना उसके लिए अल्लाह की इबादत करने जैसा होगा.

मैं उदास-सी घर लौट आती हूं.

''मां क्या इंडिया की याद आ रही है? लगता है आप यहां बोर हो गयी हैं...''

''नहीं ऐसी कोई बात नहीं है, मेरा परिवार यहां है, वहां मुझे किसकी याद आयेगी? हां अपनी माटी की याद जब-तब आ ही जाती है...'' मैं झटपट बोल पड़ती हूं.

बहू लाड़ लड़ाती है — ''मां आपके वीज़ा में अब एक ही महीना बचा है, पांच महीने कैसे निकल गये पता ही नहीं चला, आपके रहने से हम घर की तरफ़ से कितना निश्चिंत हो गये हैं, सब कुछ ताज़ा-ताज़ा और बेहतरीन मिल रहा है, वरना तो हम दोनों शाम को जो खाना तैयार करते हैं उसी को अगले दिन तक चलाते हैं. सुबह आठ बजे ड्यूटी के लिए भागना होता है कौन सुबह खाना बना पायेगा...''

''मां एक बार हमारे वीज़ा का अंतिम बैरियर पार हो जाय तब हम हमेशा के लिए यहां रह सकते हैं, अपना घर ख़रीद सकते हैं, तब आप भी हमेशा के लिए हमारे साथ रह पायेंगी...''

बहू की बातों का समर्थन बेटा भी करता है.

बैकेट्स के पार्क की अक्टूबर की गुनगुनी धूप में मैं अपनी पीठ सेंक रही थी कि वह अचानक मुझे दूर से आता दिखता है, मैं ख़ुशी से उछल-सी पड़ती हूं. साठ साल की उम्र में भी सोलह साल की किसी षोड़शी जैसी तरंगें मेरे अंदर हिलोरें लेने लगती हैं. मैं देखती हूं वह धीमे क़दमों से लड़खड़ाता-सा चल रहा है, बहुत थका-सा लग रहा है. मैं तेज़ चाल से उसके पास तक पहुंच जाती हूं...

''अरे कहां रहे इतने दिन? मैं बहुत परेशान थी आपके लिए, सब ठीक तो है ना...?

मैं एक सांस में बोल जाती हूं, ''हां सब ठीक है, कोई ख़ास बात नहीं, थोड़ी तबियत मेरी नासाज़ हो गयी थी, इधर कई दिनों से ठीक से रात में नींद नहीं आती थी न. दिमाग़ में खलबली मची रहती थी शायद उसी का नतीज़ा है यह...''

मैं कुछ लजा-सी जाती हूं, क्या सोचता होगा यह? किसी ने सही कहा है प्यार करने की कोई उमर नहीं होती, कहीं यह मुझसे प्रेम तो नहीं करने लगा है? नहीं नहीं यह कैसे संभव है उसे मालूम है मैं साठ बसंत देख चुकी हूं. मैं पेंशनयाफ़्ता हूं, वह भी तो अठावन साल का ख़ुद को बता चुका है, किसी साठ साला औरत से किसी को प्यार कैसे हो सकता है...

मेरे अंदर विचारों का तूफ़ान चल रहा था.

''यहां अच्छी धूप रही है चलो यहीं घास पर बैठ जाते हैं, घास पर बैठने का आनंद ही कुछ और है...

वह घास की तरफ़ इशारा करता है, ''यहां पर नमी बहुत है और घास के नीचे कीड़े भी दिख रहे हैं...''

मेरी बात के समर्थन में वह अपना सिर हिलाता है, हम दोनों फिर उसी बेंच पर लौट आते हैं जहां दो महीने से हम घंटों बैठकर अपने-अपने देश की राजनीति, नेताओं, समाज, रीति-रिवाजों, ग़रीबी, अशिक्षा, साहित्य, संस्कृति न जाने कितने ही विषयों पर बातें किया करते थे.

मैं बातों का सिलसिला शुरू करती हूं, ''मेरे वीज़ा में अब एक ही माह बचा है फिर मुझे लौटना होगा अपने देश...''

वह कुछ नहीं बोलता. बस पेड़ों और उन पर बैठे परिंदों को निहारता रहता है.

''आप पाकिस्तान कब जायेंगे?''

मैं उसको कुछ बुलवाना चाहती हूं,

''देखिए कब अल्लाह की मर्ज़ी होती है, वैसे मुझे वहां लौटने का बिल्कुल मन नहीं है, मेरा डॉक्टर बेटा यहीं का रेज़ीडेंट है, मैं हमेशा भी यहां रह सकता हूं.'' वह संक्षिप्त-सा उत्तर देकर फिर चुप हो जाता है.

मैं हार नहीं मानती, उसकी चुप्पी मुझे बर्दाश्त नहीं हो रही.

''उस दिन की मेरी कहानी तो अधूरी रह गयी थी आपने पूरी सुनी नहीं. आपके घर से फ़ोन आ गया था आपको जाना पड़ा था. किसी को अपनी अधूरी कहानी सुनाना सुनाने वाले को भी अच्छा नहीं लगता...'' मैं याद दिलाती हूं उसे,

वह थोड़ा चैतन्य होता है — ''हां, हां सुनाइए मोहतरमा! आपके इश्क की दास्तां अधूरी रह गयी थी उस दिन...''

वह मुस्कुरा उठता है, कितनी जानलेवा मुस्कुराहट थी उसकी, उसकी पूरी शख़्सियत अदब का फलसफ़ा थी. मैं उसे देखकर सोचने लगती, यदि हिंदुस्तान और पाकिस्तान

के आम लोगों का आपस में मिलना-जुलना होता रहता तो ये दुश्मनी, गोला बारूद की बातें हवा में ही फट जातीं. जहां ऐसी शख़्सियतें रहती हों, वहां मुर्दादिल भी बम फोड़ने की बात नहीं सोच सकता.

देश, समाज की बातें रोज़-रोज़ कितनी की जा सकती थीं, एक दिन ऐसा भी आया जब हम दोनों व्यक्तिगत जीवन की बातें भी करने लगे थे, उसने बताया था उसकी बीबी उसकी ख़ाला की बेटी थी बहुत चंचल बहुत बातूनी, किसी तितली–सी थी वह. उसके दिल के किसी भी कोने में उस लड़की के लिए कोई जगह नहीं थी परंतु अब्बू की ख़ातिर उसको सफ़ीना को अपनी दुल्हन बनाना पड़ा था. अधिकतर मुसलमानों की तरह उसके अब्बू को भी किसी पारिवारिक मज़बूरी में ख़ालाजान को इस विवाह के लिए वचन देना पड़ा था. वे सच्चे मुसलमान थे इसलिए अपने वचनों से नहीं हट सकते थे. अब्बू के दिये वचनों का ख़ामियाजा साहिल को ताउम्र भुगतना पड़ा था.

साहिल गहरी आह भरकर अपनी दास्तां सुना रहा था उस दिन उसकी पलकें भीगीं थीं, अब्बू के वचन मैंने अवश्य पूरे किये थे परंतु प्यार न पाने की कसक ने मुझे हमेशा बेचैन रखा था. साथ रहने पर बच्चे हर औरत मर्द के हो ही जाते हैं. सफ़ीना से भी चार बच्चे पैदा हुए. फिर भी मैं उसे प्यार न कर सका. देह से जुड़ना हम दोनों की ज़रूरत थी, इसलिए हम उस ज़रूरत को पूरा करते रहे. मन प्यासा ही रहा सदा.''

वह गहरी उदासी में था.

''आशा बेगम! प्यार मिला मुझे पचास की उम्र में, मैंने टूटकर प्यार किया उस औरत को, रोशनी नाम था उसका. रोशनी भर दी थी उसने मेरे अंधेरे दिल में, इंसान को नहीं मालूम ज़िंदगी के किस मोड़ पर उसका प्यार उसका इंतज़ार कर रहा होगा...''

वह मुझे आशा बेगम बुलाता था, और शरारत की हंसी हंसता था. निर्दोष हंसी — ''आप पाकिस्तानी होतीं मोहतरमा तो आपका नाम आयशा बेगम होता, आशा और आयशा में कितना कम अंतर है ना?...वह खिलखिलाता.

मैं अभिमंत्रित-सी उसके इश्क की दास्तां कई रोज़ तक सुनती रही थी, कौन कहता है शांति, संतुष्टि और आनंद के लिए आध्यात्म का सहारा लेना चाहिए, प्रेम करना भी तो एक प्रकार का आध्यात्म ही है यदि वह

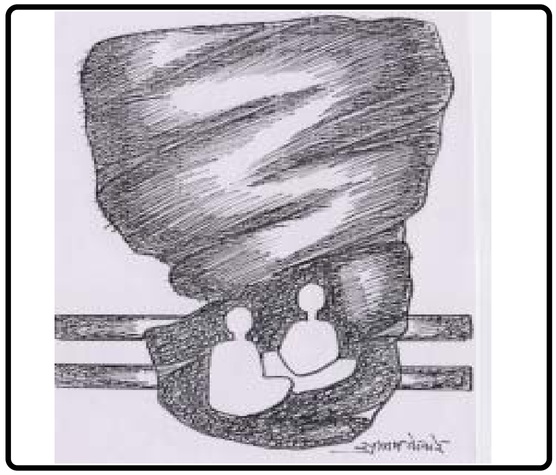

निस्वार्थ भाव से किया जाय.

''हां तो मैं कह रहा था ना रोशनी न कुंवारी थी न युवा थी वह अठतालीस बरस की एक प्रौढ़ स्त्री थी दो बच्चों की मां. सत्तर बरस के दूल्हे की चौथी दुल्हन...''

''उफ् अपने पति से बाईस बरस छोटी?....'' मैं प्रश्न करती हूं, ''बाईस बरस कुछ नहीं है ग़रीबी में किसी औरत का पति उसके दादा की उमर का भी हो सकता है, उमर औरत की देखी जाती है पुरुष हर उम्र में पाठा ही होता है...'' वह व्यंग्य भरी हंसी हंसता है.

''पूरी दुनियां में औरतों की स्थिति कमोबेश एक-सी ही है, जीवन की सारी विडंबनाएं उन्हीं के हिस्से आती हैं...'' मेरी बात का कोई उत्तर दिये बग़ैर वह अपनी दास्तान आगे बढ़ाता है —

''जीवन ठीक–ठाक चल रहा था. मैं अपने बिज़नेस में इस कदर मसरूफ़ रहता था कि बाक़ी बातों की तरफ़ ध्यान कम ही भटकता था. अम्मीजान को आये लकवे के अटैक ने मेरी ज़िंदगी को प्रभावित कर दिया था. अब्बू अस्सी साल की उमर में अब अम्मी की देखभाल करने लायक नहीं रह गये थे, सफ़ीना का अधिकतर समय पहले की तरह अपने मायके, बहनों, दोस्तों, किटी पार्टियों में बीतता था. अम्मी की देखभाल के लिए मज़बूरन मुझे अख़बार में इश्तहार निकालना पड़ा था. आठ-दस औरतें आयी भीं परंतु मुझे कोई भी ऐसी न लगी, जिसके भरोसे उतना बड़ा घर और अम्मी को छोड़ा जा सके. मैं हार गया था. दो महीने से मेरा बिज़नेस भी सफर कर रहा था तभी मेरे मुहल्ले की एक जान-पहचान की औरत रोशनी को लेकर

मेरे घर आयी थी...''

साहिल बिना कॉमा, फ़ुलस्टॉप के अपनी कहानी सुनाने में मशगूल था. मैं घड़ी की तरफ़ देखती हूं, पांच बजने को हैं, ठीक छः बजे बच्चे ऑफ़िस से आ जाते हैं आज मैंने उनको सुबह से बता रखा है कि मैं शाम को उनको गरमागरम प्याज़ और पालक की पकौड़ियां खिलाऊंगी चाय के साथ.

''ओके मोहतरमा आप जायें, आगे की कहानी कल. मैं भी पार्क का एक चक्कर लगा कर घर की तरफ़ तशरीफ़ ले जाता हूं. मेरी दास्तां पूरी हो तो फिर इतमीनान से आपकी सुनेंगे, इस उम्र में अतीत में जीने के अलावा और रखा ही क्या है...

हम दोनों पार्क की अलग-अलग दिशाओं को वापसी की ओर मुड़ जाते हैं.

आज वह मुझसे पहले पार्क मैं मौज़ूद था. मुझे रेशमी एम्ब्राइडरी वाले चंदेरी सिल्क के कुर्ते और पलाजों में देख कर प्रशंसा भरी निग़ाहों से देखता है — ''मोहतरमा आपका सजने-संवरने का सलीका क़ाबिले तारीफ़ है. आप जो भी पहनती ओढ़ती हैं उसमें एक गरिमा होती है, सौंदर्य वही है जिसमें गरिमा भी हो...

''आपने इन दो महीनों में ही मेरी आदत बिगाड़ दी है, इतनी तारीफ़ें अपनी मुझे कभी सुनने को नसीब नहीं हुईं जो सात समुंदर पार सुनने को मिल रही हैं, हिंदुस्तान जाकर बहुत मिस करूंगी मैं इन तारीफ़ों को...''

मैं खिलखिला पड़ती हूं,

''मोहतरमा मैंने महसूस किया है जीवन के प्रति आपका जो साफ़ नज़रिया है, सोच है, एक मासूम खिलखिलाहट है, उसके कारण आप भले ही ख़ुद को साठ का बतायें, परंतु कोई इसको मानने को तैयार नहीं होगा. आपकी उम्र सर्टिफ़िकेट में दस बरस ज़्यादा लिख गयी होगी...

''शुक्रिया, आपका तहेदिल से शुक्रिया इस जर्रानवाजी के लिए...''

मैं भी उसकी संगत में कुछ-कुछ उर्दू के शब्द सीख गयी थी, उनके प्रयोग से भाषा में जान आ जाती थी.

मेरे दिल के एक कोने में कुछ ख़ुदगर्जी समा गयी थी, मैं मन ही मन चाहने लगी थी कि साहिल अब केवल मेरे बारे में बात करे लेकिन रोशनी थी कि ज़बर्दस्ती हमारे बीच में आकर खड़ी हो जाती थी.

''हां तो मैं बता रहा था न कि रोशनी ने हमारे अंधेरे घर में रोशनी भर दी थी, सुबह दस से रात दस बजे तक ड्यूटी थी उसकी. समय की ऐसी पाबंद कि दस से पहले ही वह हाज़िर हो जाती थी. बहुत कम बोलती थी वह. अपनी तकलीफ़ों, निजी बातों पर वह एक शब्द भी नहीं बोलती थी अम्मी की सेवा ऐसे करती जैसे खुदा की इबादत कर रही हो, अम्मी की गंदगी साफ़ करना, नहलाना, कपड़े बदलना, खाना खिलाना, दवा देना, मालिश करना, उनको धीरे-धीरे कमरों में टहलाना. हर काम वह पूरी तन्मयता से करती, समय मिलते ही बीच-बीच में अब्बू की देखभाल भी करती थी, कभी रसोइया न आता तो रसोई भी संभाल लेती.

ऐसी शरीफ़ औरत मैं पहली बार देख रहा था. मैं बहुत इज़्ज़त करता था उसकी. मैं सफ़ीना से उसकी तुलना करता, काश सफ़ीना भी ऐसी रहमदिल और सलीकेदार होती...''

उसकी समुंदर-सी गहरी आंखों में उदासी तैर रही थी.

साहिल के दिल में मेरी क्या जगह बनी है यह मेरे लिए समझना मुश्किल था, परंतु मैं खिंच रही थी उसकी तरफ़, हालांकि मैं जानती थी साहिल से यह मुलाकात कुछ ही दिनों की शेष है. फिर न जाने वह कहां होगा, मैं कहां. कुछ भी हो ये पाक मुलाकातें मेरे जीवन में किसी अमूल्य खजाने की तरह होंगी. यहां आकर मैंने जाना था मनुष्य दुनियां के किसी भी कोने में रहे, कोई भी धर्म अपनाये, किसी भी संस्कृति में रचा-बसा हो, अंतरमन सबका एक-सा होता है सबके सीने में वही नाजुक दिल होता है जो प्रेम के लिए धड़कता है, न कि केवल ज़िंदा रहने के लिए.

किसी कथावाचक की तरह रोज़ दोपहर बाद साहिल थोड़ा-थोड़ा कर अपनी कथा सुनाता ओर मैं रसिक श्रोता की तरह उसकी व्यथा सुना करती.

''रोशनी की महीनों की सेवा से भी अम्मी की तबियत बहुत नहीं सुधर रही थी. वे बोल न पातीं लेकिन उनकी आंखें डबडबाई रहती थीं, शायद जिस बहू को वे बड़े मनोयोग से घर लायी थीं उससे मुख़ातिब न हो पाने की लालसा उनके अंदर थी अथवा मेरे भविष्य के लिए चिंता थी कौन जाने? उस दिन अम्मी को तेज़ बुखार हो आया था. वे छटपटा रही थीं रोशनी की मदद के लिए मैं भी पूरी रात अम्मी के कमरे में रहा था. रोशनी से मैंने रात में रुकने के

लिए शाम को ही मिन्नत कर ली थी, वह दो घंटे के लिए घर जाकर अपनी व्यवस्था कर रात में रुकने के लिए आ गयी थी. अपने दोनों किशोर बच्चों को भी साथ लायी थी वह. अब्बू भी किसी अनहोनी की आशंका से अम्मी के कमरे में ही सोफ़े पर लेट गये थे, मैं चोरी-चोरी रोशनी को देखता और कल्पनाओं में खो जाता काश यह मेरी हमसफ़र होती तो मेरा जीवन जन्नत बन जाता. सफ़ीना गहरी नींद में अपनी आरामगाह में थी उस संकट की रात में भी. बड़ी ख़ुदगर्ज़ औरत है वह...''

साहिल बुदबुदा रहा था, कुछ मिनट तक वह ख़ामोश हो गया था, शायद उसका गला भर आया था वह कुछ बोल नहीं पा रहा था. पांच साल पहले की घटनाएं उसको आज भी पीड़ा दे रही थीं, वह दर्द से अभी भी छटपटा रहा था. मैं उसके हाथ के ऊपर अपना कांपता हाथ रख देती हूं उसे सात्वंना देने के लिए, उफ़ इतना मैच्योर आदमी भी कितना कमज़ोर है अंदर से.

''अम्मी के जीवन की वह आख़िरी रात थी. बेहोशी में जाने से पहले कुछ देर वे होश में आयी थीं. कांपते हाथों से उन्होंने मेरे हाथ में रोशनी का हाथ दे दिया था. वे कुछ अस्पष्ट-सा बोल रही थीं. उनकी आंखों के कोरों से दो आंसू लुढ़क पड़े थे. हम दोनों आवाक थे, अब्बू ने भी यह सब अपनी खुली आंखों से देख लिया था.''

हमारी झिझक देख अब्बू ने चुप्पी तोड़ी थी — ''साहिल तुम्हारी अम्मी ने जाते-जाते सही रास्ता दिखाया है हम सभी को. अम्मी के इशारों को समझने की कोशिश करो, जब भी ज़िंदगी मौक़ा दे, रोशनी को अपना लेना.

कुछ देर के सन्नाटे के बाद वह आगे बोलने लगा था — ''अम्मी के जाने के बाद महीने भर के अंदर अब्बू भी चल बसे थे. रोशनी के अलावा मेरी ज़िंदगी में कुछ नहीं बचा था. चारों बच्चे अपनी अपनी ज़िंदगी में मस्त थे, सफ़ीना मेरी हमसफ़र अपनी ज़िंदगी में व्यस्त. मैं रोशनी के प्रेम में डूब गया था. वह भी मेरे सच्चे प्रेम की गिरफ़्त में क़ैद हो गयी थी. अपने शौहर से बहुत डरती थी वह. लेकिन वह डर भी उसे मुझसे दूर न कर पाता. मेरे घर रहने का उसका अब कोई काम नहीं रह गया था. मैं जब भी बिज़नेस के सिलसिले में बाहर जाता, रात रोशनी के साथ बिताकर मुंह अंधेरे उसके घर से निकल आता था.''

मैं स्पष्ट महसूस करती रोशनी के ज़िक्र से साहिल के रोम-रोम में अभी भी तरंगें दौड़ रही हैं, रूहानी प्रेम कितना अद्भुत होता है.

''यह सही है कि मैं रोशनी को एक महबूबा की तरह सिर से पैर तक प्यार से भिगो देता था. उससे मिलने के बाद ही मैं जान पाया कि स्त्री-पुरूष के संसर्ग में यदि प्रेम की तरंगें हों तो उनके मिलन से संगीत की लहरियां निकल सकती हैं. उसके बाद वह मेरी अम्मी का रूप रख लेती. अपनी गोद में मेरा सिर रखकर मेरे बालों में धीरे-धीरे मसाज़ करती. मेरा माथा सहलाती, उसको चूमती, अपने हाथों से मुझे खाना खिलाती, दूध पिलाती. साहिल हांफ रहा था जैसे वह रोशनी के संसर्ग में अभी भी हो.

मैं अपने अंदर कुछ खिन्नता महसूस करती हूं, इसको आज इसी मोड़ पर छोड़ देना चाहिए.

''साहिल मेरे इंडिया लौटने में केवल एक हफ़्ता रह गया है. मुझे काफ़ी शॉपिंग भी करनी है, कल सुबह हमें बिस्टर विलेज़ जाना है शॉपिंग के लिए. बीच में एक चक्कर लंदन भी जाना है अपनी एक दोस्त से मिलने, अपने परिवार के लिए मेरे द्वारा उसे कुछ सामान भिजवाना है. आज मैं उसका सामान ले जाऊंगी तभी तो कल को मेरे बच्चों के लिए वह कुछ सामान लायेगी...''

भारत वापस आने के दो दिन पहले ही मुझे बैकेट्स पार्क जाने का मौक़ा मिल पाता है. सदा की भांति साहिल मुझे उसी बेंच पर बैठा मिलता है — ''वह तपाक से मेरा हाथ अपने हाथ में ले लेता है — ''मोहतरमा! आपने तो मेरी जान ही सुखा दी, कहां रहीं इतने दिन? इतनी बेरुखी ठीक नहीं. अभी मेरी कहानी पूरी नहीं हुई है और मैंने आपकी दास्तां तो सुनी ही नहीं और आप इतना लंबा ग़ायब हो गयीं...''

वह शिकायत भरे लहजे में बोलता है, ''अच्छा आज आपकी पूरी दास्तां सुनने के बाद ही मैं घर जाऊंगी, जल्दी बताइए मैं जानने को बेताब हूं रोशनी अब कहां है? आपने उससे निकाह किया?

वह किसी बच्चे की तरह सुबक पड़ता है, ''मैं बड़ा बदक़िस्मत हूं प्रेम मेरी क़िस्मत में नहीं. मेरी लापरवाही से रोशनी गर्भ से हो गयी थी, चार माह बाद उसको भी पता चल पाया था ख़ुद के बारे में. वह बेहद डर गयी थी.

उसके अपने पति के साथ किसी प्रकार के शारीरिक रिश्ते वर्षों से नहीं बने थे, वह बावली हो गयी थी कि किस

पीड़ा आंसू में ढलती है

मधु प्रसाद

महाकुंभ जैसे सुधियों का
पीड़ा आंसू में ढलती है,
पलकों के तटबंध तोड़कर
सूनी आंखों को मलती है.

मौसम की मुखबरी देखकर
पतझड़ ठगा हुआ लगता है,
व्यर्थ हो गये सभी आंकड़े
केवल शून्य भाव जगता है.
सूद, मूल पर भारी ठहरा
गिन-गिन कर अंगुली छलती है.

क्या नभ को मैं छू पाऊंगी
सोच रही अभिलाषा मन में,
खुले हुए पिंजरें के द्वारे
कैसे भरे उड़ान थकान में,
पंछी की पांखों पर बैठी
प्रत्याशा जैसे पलती है.

जब से सावन हुआ महाजन
रहन हो गये ढाई आखर,
जांच रहा है व्यथा प्रीत की,
नकली बांटों से तुलवाकर,
और वसूली की पोथी ले
पुरवाई आगे चलती है.

मौन विरल है संवादों का
पद प्रत्यय सब टूट गये हैं,
अनुभावों की हुई दुर्दशा
सर्वनाम तक लूट गये हैं,
पुरोवाक लिखने को मसि की
संभावना सदा टलती है.

डुबकी डुबकी डूब रही है
देवदारु जैसी आशाएं,
संतपर्ण करके लौटी हैं
श्रीहीन होकर इच्छाएं,
सूने चौबारे में आकर
विरहिन तृष्णा से जलती है.

२१, गोकुलधाम सोसायटी, कलोल-महेसाणा, राजपथ, चांदखेडा, अहमदाबाद-३८२४२४.

तरह अब वह अपनी इज़्ज़त बचायेगी. मेरे समझाने का भी उस पर कोई असर नहीं हो रहा था. मैं अवसर तलाशने लगा था कि सफ़ीना को राजी कर किसी तरह रोशनी से निकाह कर लूं, हालांकि मैं जानता था यह बिल्कुल ही नामुमकिन बात है, सफ़ीना राजी न होगी और उसका शौहर तो उसको मार ही डालेगा.

मैं मामले को संभालने की कोशिश कर रहा था परंतु रोशनी को मेरे ऊपर शायद भरोसा नहीं था. उसने किसी मिडवाइफ़ से बच्चा तो गिराने के लिए मिन्नत की थी. उस अनाड़ी मिडवाइफ़ ने बच्चा गिरा दिया था पर उस अनाड़ी के हाथों रोशनी भी चल बसी थी.

साहिल फूट-फूट कर रो रहा था. मेरे आंसू भी रोके नहीं रुक रहे थे. मैंने एक बच्चे की तरह अपनी गोद में उसका सिर रखकर उसके आंसू पोछे थे. हम दोनों निशब्द थे, पूरे पार्क में निस्तब्धता पसरी थी.

घंटों बाद मैं वापस लौट रही थी. पीछे से साहिल की धीमी आवाज़ मेरे कानों से टकरा रही थी...''मोहतरमा! आपसे भी शायद मेरी यह आख़िरी मुलाकात है, पहली दफ़ा इस पार्क मैंने आपको देखा था तो एकबारगी लगा मेरी रोशनी रूप बदलकर मुझसे मिलने यहां आ गयी है...''

☐

बेटे ने गाड़ी में सारा लगेज़ रख लिया है, मैं अनमनी-सी साहिल के बारे में सोच रही हूं. मुझे याद आता है मैं कितनी अहमक हूं, मैंने साहिल का नंबर भी नहीं लिया. अपने मोबाइल से उसकी एक तस्वीर ही खींच ली होती. मैं पार्क में एक चक्कर लगाकर आने की बात कहकर साहिल को ढूंढ़ने निकल पड़ती हूं. उसे मालूम है आज मैं चली जाऊंगी इसलिए शायद आज वह जल्दी पार्क में आया हो. पार्क में कुछ परिंदों के अलावा और कोई नहीं है, बेटा पीछे से आवाज़ देता है —''मां जल्दी करो क्या ढूंढ़ रही हैं यहां? आपको मालूम है ना इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर चार घंटे पहले रिपोर्ट करनी होती है. डेढ़ घंटा हमें बर्मिंघम एयरपोर्ट तक पहुंचने में लग जायेगा.''

मैं खिसियायी-सी परिंदों की तस्वीर अपने मोबाइल में क़ैद करने की कोशिश करने लगती हूं, मेरी कोशिश बेकार जाती है, परिंदें आसमान में उड़ जाते हैं.

संपादक ''उत्तर प्रदेश''
सूचना एवं जन संपर्क विभाग,
लखनऊ-२२६००१.
मो.: ८१७४८२४२१२

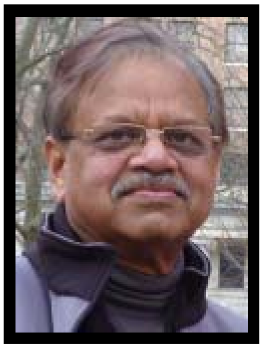

दूसरा राज महर्षि

अरुण अर्णव खरे

२४ मई १९५६ को अजयगढ़, पन्ना (म.प्र.); भोपाल विश्वविद्यालय से मेकेनिकल इंज़ीनियरिंग में स्नातक. संप्रति लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग से मुख्य अभियंता पद पर कार्यरत रहते हुए सेवा निवृत.

: प्रकाशन :

कहानी और व्यंग्य लेखन के साथ कविता में भी रुचि. कहानियों और व्यंग्य आलेखों का नियमित रूप से देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं सहित विभिन्न वेब पत्रिकाओं में प्रकाशन. एक व्यंग्य संग्रह और एक कहानी संग्रह सहित दो काव्य कृतियां - 'मेरा चांद और गुनगुनी धूप' तथा 'रात अभी स्याह नहीं' प्रकाशित. कुछ साझा संकलनों में भी कहानियों तथा व्यंग्य आलेखों का प्रकाशन. एक कहानी संग्रह 'भास्कर राव इंज़ीनियर' व एक व्यंग्य संग्रह 'हैश, टैग और मैं' प्रकाशित. कथा-समवेत द्वारा आयोजित कहानी प्रतियोगिता में कहानी 'मकान' पुरस्कृत. एक व्यंग्य उपन्यास शीघ्र प्रकाश्य. गुफ़्तगू सम्मान (इलाहाबाद) सहित दस-बारह सम्मान. इनके अतिरिक्त खेलों पर भी छः पुस्तकें प्रकाशित. भारतीय खेलों पर एक वेबसाइट www.sportsbharti.com का संपादन. आकाशवाणी एवं दूरदर्शन पर भी वार्ताओं का प्रसारण.

गया प्रसाद स्मृति कला, साहित्य व खेल संवर्द्धन मंच का संयोजन एवं अट्टहास पत्रिका के म. प्र. प्रमुख. हाल ही में अमेरिका में काव्यपाठ.

शहर के लगभग सभी मुख्य चौराहों पर लगे राज महर्षि के बड़े-बड़े होर्डिंग्स को जब भी अनुरीता देखती उसके मन में एक ही ख़्याल आता कि कब उसका बेटा बड़ा होगा और वह उसकी तस्वीर इन होर्डिंग्स पर चमकते हुए देखेगी. राज महर्षि उस वर्ष का आई. आई. टी. टॉपर था. पहली बार शहर के किसी लड़के ने इतनी बड़ी सफलता हासिल की थी. अनुरीता का बेटा शौर्य तब छोटा ही था और नौवीं में पढ़ रहा था. पढ़ने में वह भी बहुत होशियार था और अब तक किसी भी इम्तिहान में दूसरे नंबर पर नहीं आया था. इसी कारण अनुरीता बड़े-बड़े सपने देखने लगी थी. उसने अपने मन की बात को शौर्य से छुपाना भी उचित नहीं समझा. वह सोचती थी कि शौर्य को अभी से प्रेरित करने के लिए ज़रूरी है उससे अपने मन की बात कह दी जाये ताकि उसे पता रहे कि उसकी मंज़िल क्या है. एक दिन जब दोनों न्यू मार्केट से ऑटो में लौट रहे थे तो अनुरीता ने सेकेंड स्टॉप पर लगे होर्डिंग की ओर इशारा करते हुए कहा — 'शौर्य, उधर देखो, एक दिन मैं भी तुझे वहीं पर देखना चाहती हूं, आज से तू दूसरा राज महर्षि.'

'मां, मेरा नाम शौर्य है,' अनुरीता का बेटा तुनक गया.

'हां बेटा, तू शौर्य ही है, और होर्डिंग पर भी तेरा नाम ही लिखा होगा. कुछ इस तरह से... शहर का दूसरा राज महर्षि... शौर्य आनंद' यह कहते हुए अनुरीता की आंखों में सौ केंडिल पॉवर की चमक उभर आयी, पर शौर्य के चेहरे से लग रहा था कि मां का बार-बार उसे राज महर्षि कहना पसंद नहीं आया था.

समय अपनी चाल चलता रहा. शौर्य ने नौवीं में भी टॉप किया. दसवीं के बोर्ड एग्ज़ाम में उसे पूरे राज्य में तीसरा स्थान मिला. गणित में उसे पूरे सौ मॉर्क्स मिले थे. अनुरीता ने मानो दुनिया ही जीत ली. वह आसमान में उड़ते हुए इतनी ऊंचाई तक पहुंच गयी थी कि उसे इंद्रधनुष भी अपने पैरों के नीचे दिखाई देने लगा. उसे पूरा विश्वास हो चला था कि शौर्य की तस्वीर एक दिन होर्डिंग्स पर ज़रूर जगमगाएगी. उसे जब भी मौक़ा मिलता वह शौर्य को राज महर्षि की याद दिलाना नहीं भूलती. अपनी

ख़ुशी और सपने को बांध पाना उसके लिए मुश्किल होता जा रहा था. जाने-अनजाने उसने कितने ही लोगों को इस बारे में बता दिया था. कुछ लोगों ने तो उसकी बातों पर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया तो कुछ ने उसे — 'हां... हां... क्यूं नहीं... शौर्य तो बहुत होशियार लड़का है... वह ज़रूर टॉप करेगा' जैसी बातें कर अनुरीता का उत्साह बनाये रखा. कुछ ने मन ही मन उस पर व्यंग्य बाण भी चलाये — 'बहुत उड़ रही है अभी से... देखना एक दिन मुंह दिखाने से भी कतराएगी...'

अनुरीता की बेसब्री दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी. ये समय इतना धीरे-धीरे क्यूं चल रहा है... शौर्य तो अभी ग्यारहवीं में ही पढ़ रहा है. दो साल और इंतज़ार करना है उसे अभी तो. चौराहों पर लगे राज महर्षि के पोस्टर भी धुंधलाने लगे थे पर अनुरीता के मन मे अंकित राज की छवि अब भी वैसी दमक रही थी जैसी कोचिंग सेंटर के ऊपर लगे नियॉन लाइट वाले होर्डिंग में दमका करती थी.

उस दिन शौर्य अनुरीता पर बड़ा नाराज़ हुआ जब उसने सरिता और रश्मि आंटी से मां को कहते सुन लिया था — 'मैं बहुत बेसब्री से उस दिन का इंतज़ार कर रही हूं जब मेरा शौर्य दूसरा राज महर्षि बनकर इस शहर की हर गली में चर्चा का केंद्र बनेगा.' सरिता तिवारी और रश्मि सिन्हा अनुरीता की पक्की सहेलियां थीं और उस दिन मधु सुगवेकर की किटी-पार्टी से लौटते हुए घर पर रुक गयी थीं.

'अनुरीता... हम सबकी इच्छा है शौर्य ऐसी सफलता प्राप्त करे. पर उस पर इसके लिए अभी से दबाव बनाना ठीक नहीं है' – रश्मि आंटी ने कहा था.

रश्मि... मैं नहीं मानती तुम्हारी बात को. शौर्य को पता होना चाहिए कि उसका लक्ष्य क्या है. हम क्या सोचते हैं. हमारे सपने क्या हैं – हमारी अपेक्षाएं क्या हैं... यदि उसे अभी से सचेत नहीं करेंगे तो फिर वह कैसे अपने उद्देश्य को समझेगा और प्राप्त करेगा?' — अनुरीता के हाव-भाव से लग रहा था कि उसे रश्मि की बात पसंद नहीं आयी है.

'तुम तो बुरा मान गयीं अनुरीता. मेरा मतलब ये नहीं था.' रश्मि ने कहा — 'मैं तो केवल इतना कहना चाह रही थी. कि शौर्य पर राज महर्षि बनने का एक्स्ट्रा प्रेशर न बनाया जाये. उससे अपेक्षा रखो लेकिन अपेक्षाओं का बोझ उस पर मत लादो.'

रश्मि और सरिता के जाने के बाद चाय के प्याले उठाते हुए अनुरीता बड़बड़ाती जा रही थी — 'मुझे सीख दे रही हैं... मेरे बेटे से जलती हैं दोनों... रश्मि ने तो अपने बेटे को कॉमर्स दिलाया है... मैथ्स लेकर पढ़ पाना हरेक के बस की बात नहीं है... सरिता की बेटी तो और आगे जा रही है... उसे फ़ाइन आर्ट्स से बेहतर कोई और विषय ही नहीं मिला... दिनभर काग़ज़ों पर रंग उड़ेलती रहती है. कैसी विचित्र-विचित्र आकृतियां बनाती है. उफ़.'

'मां मैं शिखर के यहां जा रहा हूं. बहुत दिनों से टेबल टेनिस नहीं खेला है... एक घंटे में लौटूंगा...' कहते हुए शौर्य ने अपनी सायकिल बाहर निकाली और चला गया.

कुछ दिनों बाद शौर्य की बर्थडे पार्टी में आये उसके दोस्तों — अनुज, मनीष और सौम्या से भी अनुरीता ने वही सब कह डाला, जो अनेक बार वह अपनी सहेलियों से कह चुकी थी — 'देखना तुम लोग... शौर्य राज महर्षि का रिकॉर्ड भी एक दिन तोड़ कर दिखायेगा — सारे शहर में उसके पोस्टर्स लगे होंगे.' उस समय तो उन्होंने — 'हां आंटी. आप सच कह रही हैं. सर को भी शौर्य पर पूरा भरोसा है', कहकर अनुरीता के मन की बात कर दी पर बाद में वे भी शौर्य को राज... राज कह कर बुलाने लगे. सुन कर शौर्य तिलमिला कर रह जाता. मां पर उसे ग़ुस्सा भी बहुत आता. पर उसे पता था कि मां से कहने का कोई फ़ायदा नहीं है. पापा की पोस्टिंग भुवनेश्वर में हो जाने के कारण दो माह में बमुश्किल चार-पांच दिनों के लिए घर आ पाते थे. शौर्य से उनकी ज़्यादा बात नहीं हो पाती थी. 'पढ़ाई कैसी चल रही है... अपना व मां का ठीक से ध्यान रखना... उनको परेशान मत करना. कोचिंग मिस मत करना. सात बजे तक घर आ जाया करो.' जैसे संवाद ही दोनों के मध्य होते थे.

शौर्य को भी राज महर्षि अब चुनौती लगने लगा था. जब भी वह रिलैक्स मूड में होता, बरबस ही राज महर्षि के बारे में सोचने लगता. यदि वह सचमुच राज महर्षि नहीं बन पाया तो मां तो टूट ही जायेगी. कितना अपमानित महसूस करेगी वह. सरिता और रश्मि आंटी कितने चटकारे ले-ले कर मां की हंसी उड़ायेंगी. मेरे दोस्त भी मन ही मन बहुत ख़ुश होंगे. मनीष तो ख़ासतौर पर... जिसने मेरा मज़ाक बनाने के उद्देश्य से पहली बार मुझे स्कूल में पीछे से 'ओय राज' कह कर पुकारा था और खिलखिलाकर उपेक्षापूर्ण ढंग

से हंस दिया था. इसके बाद तो उसके क्लासमेट्स उसे इसी नाम से बुलाने लगे थे. कितना असहज हो जाता है वह यह नाम सुनकर. शौर्य का अस्तित्व ही नहीं बचा हो जैसे.

इसी मानसिक उधेड़-बुन में डूबता–उतराता शौर्य अपने को बहुत अकेला महसूस करने लगा था. पढ़ने बैठता तो क़िताबों के बीच से निकल कर राज महर्षि उसके सामने खड़ा हो जाता. कभी उसे लगता राज महर्षि पढ़ाई में उसकी मदद कर रहा है. कठिन से कठिन सवाल वह चुटकी में हल कर लेता. तो कभी उसे इसके उलट महसूस होने लगता. जब आसान से सवाल भी उसे उलझा कर रख देते. उसे लगता राज महर्षि दूर खड़ा-खड़ा उस पर हंस रहा है. वह राज महर्षि नाम की इस पहेली से जितना दूर रहना चाहता था वह उतना ही निकट आकर उसे अपनी गिरफ़्त में ले लेती.

शौर्य ने स्वयं को स्कूल और कोचिंग तक ही सीमित कर लिया था. घर आने के बाद वह अपने को कमरे में बंद कर लेता और पढ़ने के लिए बैठ जाता. दो महीने से ऊपर हो गये थे वह न शाम को और न ही छुट्टी वाले दिनों में किसी दोस्त से मिलने गया था. टेबल टेनिस खेलने का उसका शौक़ तो बहुत पीछे छूट गया था. टीवी देखे हुए भी उसे एक अर्सा हो गया था. उसे ना ही लाफ़्टर शो से दिलचस्पी रह गयी थी और ना ही तारक मेहता का उल्टा चश्मा आकर्षित करता था. मोबाइल में भी उसने पिछले एक माह में एक बार भी नेट-पैक नहीं डलवाया था. अनुरीता बहुत ख़ुश थी कि शौर्य उसके सपने के लिए कितनी जी–तोड़ मेहनत कर रहा है. पढ़ाई में इतना खोया रहता है कि खाने के लिए नख़रे करना भी भूल गया है. लौकी और गिल्की की सब्जियां तक चुपचाप खा लेता है. अनुरीता उसकी सेहत को लेकर चिंतित भी रहती. उसे बीच बीच में उसकी मन पसंद चीज़ें बनाकर खिलाती रहती पर अनुरीता के मन में यह कभी नहीं आया कि वह शौर्य को कभी-कभी बाहर घूमने, दोस्तों से मिलने या थोड़ा बहुत खेलने के लिए कहे.

ग्यारहवीं की स्थानीय परीक्षा में शौर्य पहले स्थान से खिसक कर तीसरे स्थान पर आ गया. हमेशा खेल-कूद में मस्त रहने वाले तन्मय चतुर्वेदी ने आश्चर्यजनक रूप से सातवें स्थान से छलांग लगाते हुए टॉप किया था और सौम्या हमेशा की तरह दूसरे स्थान पर ही थी. शौर्य को पता था कि उसके पेपर्स उतने अच्छे नहीं गये हैं. हर पेपर में समयाभाव के कारण वह ५ से १० अंकों के प्रश्न हल ही नहीं कर पाया था. पर अनुरीता शौर्य के रिज़ल्ट से ज़्यादा विचलित नहीं थी. उसे लगता था कि आई. आई. टी. की तैयारी में अधिक ध्यान देने के कारण ही शौर्य पहले स्थान पर नहीं आ सका है.

रिज़ल्ट से शौर्य ख़ुश नहीं था. जीवन में पहली बार वह प्रथम आने से वंचित रहा था. और वह भी सीधे तीसरे नंबर पर जा पहुंचा था. तन्मय जिसे कभी कोई बहुत सीरियसली नहीं लेता था सीधा टॉप कर गया था. शौर्य को लगने लगा था कि उसके साथ सब कुछ ठीक नहीं है. उसकी याददाश्त उसका साथ नहीं दे रही है. कई बार आसान से फ़ॉर्मूले तक उसे समय पर याद नहीं आते और छोटे-छोटे सवालों को हल करने में भी उसे अधिक समय लग जाता है. वह क़िताबों में और ज़्यादा दिमाग़ खपाने लगा. हर समय उसे लगता रहता कि राज महर्षि उसके आसपास रहकर उसकी हर गतिविधि पर नज़र रखे हुए है. कई बार तो वह देर रात तक कुर्सी पर बैठा इसी उधेड़बुन में खोया रहता कि कहीं राज महर्षि उसकी राह कठिन बनाने का कोई खेल तो नहीं खेल रहा. फिर उसे दूसरे ही क्षण अपने पागलपन पर हंसने की इच्छा होती. लेकिन उसकी हंसी तो जैसे बहुत पीछे कहीं छूट चुकी थी. अधरों पर आने से पहले ही हंसी अंदर ही अंदर घुटकर दम तोड़ देती.

समय जैसे-जैसे बीत रहा था शौर्य का आंतरिक डर बढ़ता जा रहा था. उसे अपनी असफलता का डर बुरी तरह सताने लगा था. क़िताबें खोलते ही अक्षरों के स्थान पर उसे अब राज महर्षि के साथ-साथ रश्मि और सरिता आंटी के चेहरे भी दिखायी देने लगे थे. उसे लगता ये सभी उसकी असफलता का जश्न मनाने इकट्ठे हो गये हैं. मनीष भी दूर से उसे कितनी अजीब और मज़ाक बनाने वाली निग़ाहों से देख रहा है. वह कितना ख़ुश लग रहा है. लगता है उसे अपने फ़ेल हो जाने का उतना दुख नहीं पहुंचा है जितना उसके असफल हो जाने से उसे ख़ुशी मिली है. इन सबके बीच मां का उदास पीला चेहरा देखकर उसका मन उसे धिक्कारने लगता. उसका मन होता कि तकिए में मुंह छुपाकर रो ले. पापा प्रकट होकर ज़रूर उसे ढाढ़स बंधाते. अभी राह ख़त्म थोड़े हुई है. अगले साल और तैयारी से परीक्षा देना. अमिताभ बच्चन की वह सीख भी उसके मन-

मस्तिष्क पर उभरती, जो उन्होंने टी. वी. पर किसी कार्यक्रम में दी थी – संभवतया 'कौन बनेगा करोड़पति' में... कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती. लहरों से डरकर नौका पार नहीं होती.'

१२वीं के इम्तहान सिर पर थे लेकिन शौर्य इम्तहान देने के लिए स्वयं को तैयार नहीं कर पाया था. आधे से ज़्यादा कोर्स का वह रिवीज़न ही नहीं कर सका. कई दिनों से उसके सिर में दर्द हो रहा था... नींद भी उसकी पूरी नहीं हो रही थी. साथ ही राज महर्षि कभी भी अचानक आकर उसका रहा सहा आत्मविश्वास हिलाकर चला जाता था.

पहला पेपर देकर वह वापस आ रहा था कि रास्ते में सायकिल से गिर गया. गिरते ही वह बेसुध हो गया. उसके दोस्तों ने उसे अस्पताल पहुंचाया और अनुरीता को ख़बर दी. उसका हीमोग्लोबिन गिरकर नौ रह गया था. वजन भी ५१ किलो से घट कर ४४ किलो रह गया था. अनवरत मानसिक तनाव की काली रेखाओं ने उसके चेहरे को मलिन बना दिया था. वह बिस्तर से उठ भी नहीं पा रहा था. अनुरीता इस स्थिति में अपने बेटे को देखकर सिहर गयी. यदि सिस्टर ने उसे संभाला नहीं होता तो वह नीचे गिर गयी होती. डॉक्टर ने शौर्य को कम से कम एक सप्ताह अस्पताल में रखने को कहा... उसे नींद पूरी ना होने की वजह से सायकियाट्रिक एंड न्यूरोलॉज़िकल डिसऑर्डर हुआ था. अनुरीता तो जैसे यह सुनकर निढाल हो गयी. उसे लगा किसी उपग्रह ने उसे अंतरिक्ष में ले जाकर छोड़ दिया है. राज महर्षि के होर्डिंग के टुकड़े भी उसके साथ-साथ शून्य में घूम रहे हैं.

डी-१/३५ दानिश नगर
होशंगाबाद रोड, भोपाल–४६२०२६
मो. : ९८९३००७७४४
ई मेल: arunarnaw@gmail.com

'कथाबिंब' का यह अंक आपको कैसा लगा कृपया अपनी प्रतिक्रिया हमें भेजें और साथ ही लेखकों को भी. हमें आपके पत्रों/मेल का बेसब्री से इंतज़ार रहता है.

- संपादक

ई-मेल : kathabimb@gmail.com

लघुकथा

मां

आनंद बिल्थरे

अचानक फ़ोन की घंटीबजी. अमृता नींद से चौंककर, उठ बैठी. देखा, दीवार घड़ी एक बजा रही थी. उसका मन, आशंका से भर उठा.

- हैलो! अरे मां तुम. इतनी रात को फ़ोन किया. सब ठीक तो है न?

- हां, रे तेरी याद आ गयी थी. कैसी है तू? पढ़ाई कैसी चल रही है. सुन, अच्छे से पढ़ाई करना. अगर मैं न रहूं तो अपने पापा और चिंटू का ध्यान रखना.

अमृता हैलो, हैलो ही कहती रह गयी और फ़ोन कट गया. वह फिर सो नहीं सकी. उसके मन में ढेरों, अच्छे-बुरे विचार आ-जा रहे थे.

सहसा फिर घंटी बजी. अमृता ने लपककर फ़ोन उठाया. उस छोर पर चिंटू था. उसके मुंह से बोल नहीं फूट रहे थे.

- बोल ना चिंटू, क्या हुआ?

- दीदी, मां नहीं रही. रात साढ़े बारह बजे उनका देहांत हो गया. नेटवर्क की वजह से आपको फ़ोन नहीं लग रहा था.

अमृता के हाथ से फ़ोन छूट गया. वह समझ नहीं पा रही थी, कि जब साढ़े बारह बजे मां का प्राणांत हुआ तो एक बजे वह फ़ोन पर बात कैसे कर सकती थी. उसे मां की कही बात याद आ रही थी कि मां कहीं नहीं जाती, मरकर अपनी संतानों में समा जाती है. उसने पर्स में रखी मां की तस्वीर को, प्यार से चूमा और आंसू बहाती हुई भोर की प्रतीक्षा करने लगी.

प्रेमनगर, बालाघाट-४८१००१
मो. : ७९९९७८५८६८

*एम. एस. सी., बी. एड;
मास्टर इन ज़र्नलिज्म एंड कम्युनिकेशन, मास्टर इन बिज़निस मैनेजमैंट, पी. एच. डी. (रिसर्च स्कॉलर)*

: व्यवसाय :
शिक्षक, विज्ञान, डी. ए. वी. पब्लिक स्कूल, हमीरपुर (हि. प्र.) में कार्यरत.

: प्रकाशनः
कहानी संग्रह 'अपने हिस्से का आसमान' व 'अस्तित्व की तलाश' प्रकाशित.

गाइड

संदीप शर्मा

स्पेन के पर्यटकों का दल हिमालयी पर्वत श्रृंखलाओं की एक चोटी मून पीक पर चढ़ने के लिए रात के अंधेरे को चीरता हुआ धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था. इनमें एक नवयुवती जिसका नाम मर्सीडीज़ है, वह कोई तीन घंटे पहले एक चट्टान से फिसली थी और कोई बीस फ़ुट तक फिसलती चली गयी थी. उसके गॉड ने उसे बचाने का प्रण किया होगा कभी, तभी वह एक देवदार के तने में फंस गयी थी. उसे रस्सियों की मदद से ऊपर रास्ते तक पहुंचाया गया. उसके पांव में ज़बरदस्त मोच आ चुकी थी, वह पीड़ा से कराह उठी थी.

वह अठारह वर्ष की भूरे बालों वाली युवा, रमणीय, कोमल शरीर की लड़की है लेकिन लगातार चलने व फिर फिसलने के बाद भी उसने हिम्मत नहीं हारी थी. वह निर्णय की पक्की लग रही थी. उसने दल को परेशान न करने की ठानी और लगभग घिसटते हुए ऊपर चढ़ने का फ़ैसला किया. हिमाचल में १७,००० फ़ुट की ऊंचाई पर चद्रखानी दर्रा रात के वक़्त उनका इंतज़ार नहीं कर रहा था, पर चांद ऐसे सोच रहा था कि मानो इन हिम्मत से भरे पर्यटकों के लिए वह अपनी उधार ली हुई रोशनी उनके ऊपर बरसा दे.

चांद दानवीर बनने का हठ कर चुका था. उसने अपनी सारी रोशनी को अंधेरे में भटक रहे रास्ते पर फैला दिया पर ठंडे चांद की रोशनी हिम्मती मर्सीडीज़ के लिए ज़्यादा कुछ न कर पायी. वह अचेतन होने लगी. उनके लीडर मैन्युअल ने अपने दल के गाइड कमल से कुछ मदद की गुहार लगायी. गाइड की आंखें चांद की रोशनी में कुछ सोच कर चमकीं. उसने अपनी तेज़ रोशनी वाली टॉर्च को पहाड़ के एक कोने की ओर नीचे ढलान की एक ओर फेंकना शुरू किया. दूसरी ओर से भी तेज़ रोशनी उन पर पड़ने लगी. गाइड की आंखें और ज़्यादा चमकीं. ''उसने हमें देख लिया है,'' गाइड कमल चिल्लाया, ''दीपक, मदद चाहिए ! ऊपर आओ दल का एक सदस्य बुरी तरह से घायल है, मदद करो, ऊपर आओ दीपक.''

ये आवाज़ दूर पहाड़ से टकराने के बाद फिर से दल के कानों तक पहुंचने लगी, दल को लगा कि जैसे इस रात का अंधेरा उनकी फरियादों को फिर से वापिस भेज रहा है. पहाड़ अभिमान के नशे में चूर था. एक ओर पहाड़ से रोशनी ऊपर चढ़ने लगी और पूरा दल अपनी थकावट के बोझ में दबी ख़ुशी

को सहारा देकर उठाने लग पड़ा. उनके गाइड कमल ने उस ख़ुशी को और बढ़ाने के लिए उस रोशनी के मालिक की तारीफ़ या पहचान के बारे कुछ बताना शुरू किया. वह जो फरिश्ता पहाड़ के एक कोने से आ रहा है हमारा मददगार बनने के लिए, वह दीपक है.

वह हमें अब कई बार इस मौसम में इन वादियों में भेड़-बकरियां चराता मिल जाता है, वह एक पढ़ा–लिखा नौजवान है और पर्यटन, पहाड़, प्रकृति पर सुंदर गीत रचता है, वह एक अच्छा गाइड व ट्रैकर भी है. वह कई बार मून पीक पर चढ़ाई भी कर चुका है, अफ़सोस कि वह अब ट्रैकिंग में गाइड नहीं बनता. दल में अपने मददगार बनने वाले के लिए जिज्ञासा तो होनी ही थी इसलिए दल के लीडर मैन्युअल ने कमल से पूछा, ''क्यों?'' कमल बोला,''वह हमेशा प्रकृति की नाराज़गी के कई क़िस्से सुनाता है. हमें उसकी कुछ बातें अच्छी नहीं लगतीं जैसे वह हमें आप जैसे पर्यटकों को यहां-वहां पहाड़ों पर ले जाने का मना करता है. वह कहता है कि ये पर्यटक तुम्हारी सच्चाई, प्रकृति प्रेम, भोलापन सब तहस-नहस कर देंगे. वे तुम्हें तमाशे की वस्तु समझेंगे, वे तुम पर तरस खायेंगे, तुम्हें देहाती, दीन और हेय दृष्टि से देखेंगे. तुम पहले-पहल तो उन लोगों की सेवा में अपने आपको भूल जाओगे और फिर अपनी संस्कृति को धीरे-धीरे खो दोगे, तब तुम अपने आपको असहाय महसूस करोगे. वे सब तहस-नहस कर देंगे, तुम्हें भी अपने रंग में रंग देंगे. तुम तब अलग से सपने देखोगे और अपनी आत्मा के स्वभाव को खो दोगे.'' मैन्युअल ने टॉर्च की लाईट की दूर से आती रोशनी पर आंखें गड़ाते पूछा, ''ऐसा क्या हुआ कि वह अपनी सोच में इतना बदलाव ला बैठा.''

कमल ने फिर से बोलना शुरू किया, ''बचपन में वह गांव का एक होनहार लड़का था. हम दोनों अच्छे दोस्त थे, पर वह बहुत पढ़ाकू था, हम कई ऊबड़-खाबड़ रास्तों से होते हुए, स्कूल जाते थे. जब भी कभी हमारे इस छोटे से गांव में पर्यटक आते, वे गांव में प्रसिद्व मंदिर के दर्शन करते और फिर ऊपर पहाड़ की चोटी की ओर निकल जाते. हमें उनके कपड़े, उनका साजो-सामान बड़ा अच्छा लगता. वे कभी हमसे रास्ता पूछते पर हम उनकी भाषा नहीं समझते.

दीपक अपनी कुछ सीखी अंग्रेज़ी में उनसे बातें करने लगता तो वे लोग बड़े ख़ुश होते. हम ऐसे ही कई बार ऊपर तक उन्हें रास्ते तक छोड़ आये. मून पीक तो नाम अभी मशहूर हुआ है, हमारे दादा-पापा सब इसे चंद्रशिखा कहते हैं. मैं और दीपक बचपन में कई बार भेड़-बकरियों के संग उस पीक तक अपने-अपने बाप दादा के साथ गये हैं. पीक के दूसरी ओर एक पवित्र झील है, जहां सावन भादों को मेला लगता हैं. वहां भी हम कई बार जा चुके हैं.

हमें ट्रैकिंग का शौक़ था, शौक़ क्या! जब पूरे गांव का मुख्य पेशा भेड़-बकरियों को पालना है तो फिर भेड़-बकरियों के साथ न जाने हमने कितने ही पहाड़ की चोटियों को अपने पावों से नाप डाला होगा. बारहवीं की पढ़ाई करने के बाद वह २५ किलो मीटर दूर कॉलेज़ गया.

उसने मन में एक बात ठान ली थी कि वह अंग्रेज़ी में सबसे बेहतर बनेगा. वह ऐसी अंग्रेज़ी बोलने लगा, जैसे आप लोग बोलते हैं. उसने एक अच्छा गाइड बनने का सपना हमें बताया था. वह कहता, देखना कुछ दिनों के बाद जब यहां पर्यटकों की भरमार होगी तो फिर वह अच्छा अंग्रेज़ी बोलने बाला गाइड ढूंढते हुए आयेंगे. तब तुम लोग भी अच्छी अंग्रेज़ी बोलने को ललचाओगे, पर तब तुम्हें बड़ी मुश्किल होगी इसलिए इस वक़्त अंग्रेजी पर पकड़ बना लो तो बेरोज़गार न रहोगे. सरकार हमारे गांव से निकलने वाले ट्रैक पर बहुत से काम करने वाली है. फिर एकदम ही उसके विचार बदल गये.'' अब दल की जिज्ञासा बढ़ चुकी थी.

इस बार मर्सीडीज़ बोली,''कमल! क्या इसका कोई ठोस कारण तो होगा.'' कमल बोला, ''एक बार मेरे जोर देकर पूछने पर उसने इसका कारण सिर्फ़ यही बताया था कि वह अब रोज़ सपने में पहाड़ के देवता को अपने पास खड़ा महसूस करता है, पहाड़ का देवता उसको बार-बार यही आग्रह करता है कि मत लाओ तुम इन बिन बुलाये मेहमानों को मेरा सीना रौंदने के लिए. तुम लोग कुछ पैसे के लालच में इन सनकी, पागल व हिम्मत भरे साहसिक पर्यटकों को जब मेरे पास लाते हो, मेरा सुख चैन सब खो जाता है, मेरी भक्ति भंग हो जाती है, मेरे देवता होने की शक्तियां क्षीण होने लग पड़ती हैं. यही लोग पहले इक्कादुक्का आयेंगे, फिर कतारों में आयेंगे और फिर पहाड़ पर नंगा नाच होगा, फिर ये वादियां ज़हरीली हवा की गंध से भर जायेंगी तब मैं भी इन वादियों को छोड़कर किसी और पहाड़ पर अपना बसेरा बना लूंगा तब तुम इंसानों की रक्षा कोई न कर पायेगा, तुम तब सब के सब प्रकृति मां की नाराज़गी के शिकार बन सब नदी-नालों में बहते जाओगे, तुम्हारे ऊपर अथाह सागर का पानी बरस पड़ेगा, जो तुम्हारे घर, खेत

खलिहानों को दूर तक बहा ले जायेगा, तुम पर बड़े पत्थरों की तेज़ आंधी बड़ी निर्ममता से गिरेगी, तुम तब बहुत असहाय नज़र आओगे. यह सब तुम्हें समझ न आयेगा. तुम्हारे कई देवता तुम्हें ठुकरा देंगे वे तुम्हें छोड़कर स्वर्ग प्रवास पर लौट जायेंगे और कभी वापिस न आयेंगे, तुम बिल्कुल अकेले हो जाओगे. इसके बाद वह सिर्फ़ भेड़-बकरियों को हांकने वाला एक युवा पढ़ा-लिखा गद्धी लड़का बन गया. वह पुश्तैनी काम में हज़ारों ख़ूबियां ढूंढ़ कर एक साधु-सी बातें करने लगा. वह अलग-थलग रहने लगा.''

दीपक अंधेरे से निकलकर दल के सामने पेश हुआ. दीपक सचमुच चांद की रोशनी को अपने साथ ले आया था. अंधेरे में वह मध्यम कद का गठीला नौजवान सारे दल को रात का देवता महसूस हो रहा था. थकी-हारी व दर्द से पीड़ित मर्सीडीज़ के लिए तो वह सचमुच का देवता बन चुका था. वह बड़ी एवं तीक्ष्ण आंखों के साथ पहली नज़र में मर्सीडीज़ को बहुत सुंदर युवक लगा था.

दल ने मर्सीडीज़ को दीपक के हवाले कर आगे बढ़ने का फ़ैसला किया. दीपक के मुंह से अभी कोई भी शब्द नहीं निकला था. उसने गर्म भेड़ की ऊन से बने अपने कोट को अपने एक हाथ पर टांगा था. मर्सीडीज़ ने कहा, अगर आप मेरी वजह से मून पीक के नज़ारे को खो दें तो मैं ख़ुद में बहुत ग्लानि महसूस करूंगी, कृपया आप आगे बढ़ें, मैं चाहे तो यहीं रुक जाऊंगी, लेकिन दल के लिए बाधा न बनूंगी.

अब सिर्फ़ उसके मन में एक ही शंका थी कि कहीं दीपक ने उसकी सहायता करने में असमर्थता जता दी तो पूरे दल को या तो यहीं कहीं आसपास रुकना पड़ेगा या फिर ऐसे ही घिसटते हुए आगे बढ़ना पड़ेगा. उसने अपने गॉड से प्रार्थना की. वह सचमुच ही उस युवक की सहायता प्राप्त करना चाहती थी. दीपक पहली नज़र में मर्सीडीज़ को न तो एक देहाती लगा था और न ही शहरी. उसने एक ब्रांडेड ट्रैक सूट डाला था और पावों में रीबॉक के जूते डाले थे. टॉर्च की लाइट में उसका ट्रैक सूट व शूज़ की पट्टियां साफ़ चमक रही थीं. मर्सीडीज़ को ऐसा लगा कि जैसे एक स्पैनिश राजकुमार दूर पहाड़ियों से उतर कर उसे मुसीबत से निकालकर अपने राजमहल में ले जाने आया है.

दीपक ने मर्सीडीज़ की ओर देखा, उसके भूरे बालों पर टॉर्च की रोशनी पड़ते ही वह सुनहरे बालों वाली, चांदी-सी सफ़ेद चेहरे की मल्लिका कोई राजकुमारी पीड़ा से ग्रस्त मदद की गुहार लगा रही थी. उसके चेहरे पर दीपक को देखते ही हल्की मुस्कराहट फैल गयी. उसकी आंखों में मदद का आग्रह था. पहली नज़र में उसे वह पराया नहीं लगा बल्कि एक सुंदर नौजवान, तहज़ीब से भरा हुआ और हिम्मती. दीपक ने कुछ देर अपने पुराने साथी ट्रैकर व गाइड कमल से एक कोने में कुछ बातें कीं.

कमल ने उसे साफ़ कह दिया कि इस दल का मुख्य उद्धेश्य पूर्णिमा की रात में मून पीक के बेस कैंप में पहुंच कर पीक की अद्वितीय छटा को निहारना है. बेस कैंप में पहले से कैंपिंग का सामान है बस हम ये दो-तीन घंटे का रास्ता पूरा कर लेंगे, सिर्फ़ मर्सीडीज़ को छोड़कर दल बिल्कुल ठीक है और इन्हें ट्रैकिंग का ज्ञान भी है. हम आगे आने वाली बड़ी ढलान को पूरा करके ऊपर बेस कैंप में पहुंच जायेंगे. अगर तुम हमारे पुराने साथी होने के नाते मदद करो तो मर्सीडीज़ जो पीड़ा से कराह रही है उसे आज की रात अपने अस्थायी डेरे में आराम करवा दो वर्ना पूरा दल यहां ख़ुद भी परेशान होगा और मुझे भी परेशान करेगा.

दीपक ने कहा,''अगर मर्सीडीज़ अकेले मर्द के साथ रात भर रहने को तैयार हो तो मुझे कोई एतराज नहीं, कहीं परदेस में उसका मन डर के साये में पूरी रात न बिताये.'' गाइड कमल फिर से मर्सीडीज़ के पास गया. मर्सीडीज़ ने कहा, ''अब जब मैं आपके देश के हवाले हूं, तो मुझे आप लोगों पर विश्वास है. मैं इस वक़्त बस आराम चाहती हूं चाहे तो आप मुझे इन पत्थरों पर छोड़ जाओ.'' कमल ने फिर दल के मुखिया मैन्युअल को भरोसा दिलाया. दीपक ने अपना हाथ आगे बढ़ाया और चांदनी रात में नाजुक किंतु बहादुर लड़की ने एक अनजान व्यक्ति के हाथ को पकड़ लिया. दीपक ने गर्म ऊनी कोट मर्सीडीज़ को पहनाने की कोशिश की, वह पहले तो थोड़ा झिझकी पर फिर इस कड़कड़ाती ठंड में उसे कोट डालते ऐसा लगा जैसे उसने एक भद्र पुरुष का साथ पाकर जीवन की अथाह ख़ूबसूरती व रिश्तों की गर्माहट को पा लिया हो.

दल आगे निकल गया और एक अनजान फरिश्ते के संग कोमल मर्सीडीज़ का नाता जोड़ गया. मर्सीडीज़ ने कराहते हुए उसके साथ एक तरफ़ की ढलान पर टेड़े-मेड़े रास्ते पर पीड़ा के साथ उतरना शुरू किया. वह बड़ी मुश्किल से क़दम उठा पा रही थी. अभी उसने एक पत्थर से नीचे पांव रखा ही था कि वह फिर से कराह उठी. उसकी मोच ने उसे भयंकर दर्द दे दिया था. वह वहीं बैठ गयी. वह रोने लगी. दीपक ने देखा, क्रिस्टल की तरह आंसू उसकी आंखों से

टपकने लगे थे, टॉर्च की रोशनी में वो आंसू फिर अनमोल हीरों की तरह चमकने लगे थे. दीपक ने चांद को एक नज़र देखा और मर्सीडीज़ से एक आग्रह किया,''कृपया मैडम अगर आप इज़ाजत दें तो मैं आपको अपने कंधे पर उठा कर डेरे तक पहुंचा सकता हूं, यहां ज़्यादा देर बैठना ठीक नहीं. भालू इंसानों की गंध को सूंघ रहा होगा, हम अंधेरे में फंसे हैं.'' हार चुकी मर्सीडीज़ ने हां में स्वीकृति दे दी.

दीपक ने एक झटके में इस कमसिन युवती को अपने कंधे पर उठा लिया. उठाते वक़्त उसके शरीर की कोमलता का अहसास दीपक के हाथों के रास्ते, पूरे शरीर में फैल गया. यह अहसास फिर बढ़ता रहा, उसके सुनहरे बाल दीपक के चेहरे पर पड़ते, तो उसका शरीर झुनझुना उठता पर अंधेरे में ऊबड़-खाबड़ रास्ता उसे इस सुंदर अहसास को लेने नहीं दे रहा था. वह थक जाता तो कुछ पल उस नौजवान युवती को ज़मीन पर उतारता, फिर उसके नाजुक कूल्हों को एक हाथ से जकड़ कर उठाता और एक बाजू से उसके बाजू को अपने गले में फंसाता. यह बंधन जब मजबूत हो जाता, वह फिर उतर चलता. बेबस मर्सीडीज़ दीपक के मज़बूत शरीर की एक-एक मांसपेशी के हिलने का अहसास ले रही थी, पर उसका शरीर पीड़ा के कारण अचेतनता की ओर भी उसे ले जा रहा था. पर वह अचेतन नहीं होना चाहती थी.

वह पहली बार एक हिंदुस्तानी मर्द के कंधों पर सवार हुई थी. वह अपनी विनित युवकी की आत्मा को एक साहसी युवक की असाधारण सहानुभूति भरी अपनी आत्मा से जोड़ चुकी थी. उसे ऐसा लग रहा था जैसे वह सदियों से इस युवक के साथ जुड़ी है. वह हज़ारों मील का सफ़र करके यहां एक ग़रीब चरवाहे की सहानुभूति के जाल में फंसने आयी है.

वह एक अमीर मां-बाप की लड़की है पर उसका जुनून व सोच उसे इन पथरीले पहाड़ों पर ले जाता रहा है. ईश्वर ने उसे अभी बहुत कुछ बताना था. वह उस भद्रपुरूष की गुप्त आराधना करने लगी. वह उसकी शक्तिशाली काया की मुरीद हो रही थी. वह ईश्वरीय मदद का अहसास पा रही थी. मर्सीडीज़ को लग रहा था कि यह युवक प्रकृति के रस से अपनी आत्मा को सराबोर कर चुका है.

ये किसी हिमालयी साधु–सा प्रतीत हो रहा है जो जीवन, ज़िंदगी की कड़वी सच्चाई को समझ कर उसे अपनी धुन में जीना सिखा रहा है. उसके मन में उसके लिए कुछ प्रेम के बीज अंकुरित होते नज़र आने लगे थे जिन बीजों को हवा, पानी व ज़मीन मर्सीडीज़ ने नहीं बांटी. वे तो ख़ुद मनमानी करके यह हवा, पानी और ज़मीन चुरा ले गये थे. इस नवयुवक का स्पर्श उसके शरीर में कई तरह के स्पंदन पैदा कर रहा था. अचेतन-सी युवती उस दयालू युवक के डेरे में पहुंच चुकी थी. लेकिन वह अब अचेतन होने के बाद नींद में जा चुकी थी. युवक ने उसे अपने डेरे के एक कोने में बिछे मोटे कंबलों पर सुला दिया. मोम-सी नाजुक युवती अपने शरीर की असहाय पीड़ा के कारण आंखें नहीं खोल पा रही थी. उसके नाजुक होंठ सूखे गुलाब की पंखुड़ियों से लग रहे थे, उसके सुंदर गाल शरीर के बुखार से मोम की तरह पिघल रहे थे.

दीपक ने अपनी एक कमरे की झोपड़ी टीन के पतरों से छायी थी और बीच-बीच में तिरपाल से भी ढकी थी, वह पत्थरों को सही ढंग से टिकाकर बनायी दीपक के दादा के समय की झोपड़ी थी, जो बर्फ पड़ने से कई बार टूटी और कई बार बनी. नींद में स्वप्न में वह एक नौजवान दोस्त के साथ इस पृथ्वी के हर कोने तक उड़ती रही. ये धरा, ये हवा, ये सागर, ये पहाड़, कहीं ज्वालामुखी की भयानक गर्द में घूमती और कभी सागर की अथाह गहराइयों में गोते लगाती.

मर्सीडीज़ ने अपनी थकी आंखें खोलीं. वह अब तक इस दुनिया से बेख़बर थी, उसे लगा वह नये लोक में जन्म लेकर एकदम एक जवान युवती बन गयी है, उसकी अचेतनता ने उसे जड़ कर दिया था. उसे लगा जैसे वह किसी स्पेनिश राजकुमार के राजमहल में सोयी थी और अब वही राजकुमार उसे कहीं दिखाई नहीं दे रहा है. उसने अपने पांव की ओर देखा. गर्म पट्टियों से उसका पांव बंधा था, ये क़ीमती पट्टियां उस झोपड़ी में कहां से आयीं?

वह उठी तो एक टीस के साथ उसके पांव ने पीड़ा होने का स्पष्ट प्रमाण दिया. उसके बिछौने से कुछ दूरी पर मिट्टी के तेल से जलने वाला दीपक हवा में फड़फड़ा कर अपना अस्तित्व बताने लगा. वह धीरे-धीरे पतले से दरवाज़े से बाहर निकली. बाहर दीपक लकड़ियां जलाकर आग सेंक रहा था. मर्सीडीज़ को देखते ही उठा और बोला,''मर्सीडीज़ क्या कुछ आराम मिला है, आओ थोड़ा आग सेंक लें.'' उसने जल्दी में एक फटी-सी बोरी आग के पास बिछा दी. मर्सीडीज़ बोरी पर बैठती हुई बोली,''तुम एक फरिश्ते से कम नहीं हो, क्या इतने घने जंगल में तुम अकेले रहते हो?

क्या तुम्हें डर नहीं लगता? क्या तुम हमेशा यहीं रहते हो?'' दीपक ने मर्सीडीज़ की दो चांद–सी चमकती आंखों में देखा और कुछ सोच कर बोला, ''बस यही मेरा घर है, आराम है, ये देवदार व बुरांश के पेड़ खड़खड़ाते और कर्कश आवाज़ करके मुझे रात भर अपना साथ देते हैं. चरागाहों में घास के तिनके मेरा इंतज़ार करते हैं.''

मर्सीडीज़ बोली,''तुम बड़ी शायराना बातें करते हो प्रिय दीपक.'' और मर्सीडीज़ ने एक मुस्कराहट अपने सुंदर चेहरे पर आग की रोशनी में फैलायी. दीपक को वह किसी देव कन्या–सी प्रतीत हुई. वह भी मुस्कराया और बोला, ''ये जंगल ही कविता है, यहां हर दिन, हर रात ही एक कहानी है, यहां तो सब गाते हैं कविताएं सुनाते हैं, नाच–गाना करते हैं. प्रतिध्वनियां गूंजती हैं, पत्थर राग छेड़ते हैं.''

मर्सीडीज़ को दीपक की बातें किसी स्पेनिश कवि की तरह लग रही थीं. वह फिर बोली, ''क्या तुम हमेशा यहीं रहोगे? तुम्हारा कोई और घर नहीं.'' दीपक बोला, ''हे विदेशी परिंदे, अब जब तक मेरा मन इन सब कवियों से जुड़ा रहेगा, तब तक यहां रहूंगा. फिर तलहटी में बसे अपने छोटे क़स्बे की ओर लौट जाऊंगा, मेरे पास आराम करने का वक़्त नहीं. तुम एक साध्वी की तरह मेरे मन में बसे ईश्वर का भेद जानने आयी हो, मुझे ऐसा प्रतीत होता है तुम अपने मन को हमेशा सुंदर दृश्यों, प्रकृति के असंख्य चित्रों, हसीन वादियों की दूर तक फैली झील में डुबोये रखती हो, तुम शायद अपनी धन संपदा के दम पर अपनी बनायी योजनाओं पर कामयाब होती हो और फिर प्रसन्नता लिये यहां-वहां विचरण करती हो. मैं या मेरे जैसे लोग मन का कहना नहीं मानते और उसको छोटे-छोटे जीवन यापन के कार्यों में लगा कर उसके लिए बाहरी दुनिया के सब दरवाज़े बंद कर देते हैं. एक दिन तुम इस सारे भौतिक संसार, इस प्रकृति की रचना के चक्रव्यूह को देख लोगी समझ लोगी, पर तुम्हारा मन फिर भी शायद चैन से नहीं बैठेगा. मेरे लिए हर पल, हर क्षण प्रकृति का एक पूर्ण साक्षात्कार करवाता है तुम अभी भी मून पीक के दृश्य, कैंपिंग में अपने साथियों की मस्ती के लिए तड़प रही होगी, मुझे ऐसा लगता है पर तुम कब तक ऐसा करोगी, इस प्रकृति रुपी माया की कोई थाह नहीं.''

मर्सीडीज़ बोली,''तुम तो हमेशा भेड़-बकरियों को हांकने वाले, उनके लिए अपनी सारी मानसिक व शारीरिक ऊर्जा ख़त्म करने वाले, बहुत-सा समय अपने खाने-पीने का सामान इकट्ठा करने व पकाने में बिताते हो तो फिर तुम्हें ज़िंदगी नीरस नहीं लगती?''

दीपक मर्सीडीज़ को देख कर मुस्कराया और अंगारों को हिलाते हुए बोला,''मर्सीडीज़ मैम, यही तो फ़र्क है तुम्हारी और हमारी सोच में, हमारा मन इन भेड़ों को हांकते हुए, उनके लिए नयी चरागाहें ढूंढ़ने, नये जंगल ढूंढ़ने में लगा रहता है. साथ में यह मन ईश्वर के बनाये पहाड़ों से नीचे फैलती रोशनी, बादलों के बरसने के बाद पानी की बूंदों के रास्ता बनाने की कार्य प्रणाली में बहुत कुछ पा लेता है. इन वृक्षों को आसमान की ओर ईश्वर का धन्यवाद करते देखो, उनके आंचल में छिपे नन्हें कीट पंतगों की दुनिया को देखो. वे वृक्षों का हमेशा गुणगान करते रहते हैं, क्या तुम उनके शोर में मधुर स्वर की स्वर लहरियों को सुन सकती हो? क्या तुम कल-कल बहते झरनों, इन पत्थरों को हमेशा भक्ति भाव में ईश्वर आराधना में बैठे महसूस कर सकती हो? क्या तुम इन पथरीले रास्तों पर भटकती मेरी भेड़-बकरियों की आंखों में मेरे लिए उमड़ते धन्यवाद को महसूस कर सकती हो? मैं कर सकता हूं इसलिए, मेरा अब यही कर्म मार्ग है, मुझे अपने मन को दूर पहाड़ की चोटियों तक नहीं पहुंचाना है, उसे यहीं कहीं प्रकृति के नित नये चमत्कारों को दिखाना है. ये पहाड़ रोज़ चमत्कार करता है, ये जंगल रोज़ चमत्कारों का प्रंपच रचते हैं एक ईश्वर की शह पर और मैं इनका दर्शक हूं इकलौता और मेरे पास कोई गवाह भी नहीं है. मैंने अपनी ज़िंदगी को इन पहाड़ों के लिए समर्पित करने की ठानी है पर पहाड़ हम इंसानों से नाराज़ नहीं होने चाहिए नहीं तो सारा संगीत फिर दुर्लभ हो जायेगा. हमारे रीति रिवाज, संस्कृति इन्हीं पहाड़ों-नदियों, घाटियों, जंगलों, चरागाहों के अफ़सानों से बनी है जो अब ख़त्म हो जायेगी. हे ईश्वर अब सब बर्बाद हो जायेगा.''

यह सुनकर मर्सीडीज़ बोली,''क्या बर्बाद हो जायेगा? कैसे बर्बाद हो जायेगा? तुम क्या कहना चाहते हो दीपक?'' दीपक ने अंधेरे की ओर पेड़ों को देखा और बोला, ''तुम नहीं समझोगी मर्सीडीज़! ये एंडवेंचर, ये प्रकृति, पहाड़ तुम्हारे जैसे पर्यटकों के लिए एक तमाशा हैं, तुम लोग प्रकृति के नज़ारों को एक नयी दुल्हन-सी समझते हो, और चाहते हो कि वह दुल्हन बार-बार घूंघट उतारकर अपना चेहरा दिखाए. तुम लोग अब दर्जनों से सैकड़ों में आने लग पड़े हो, अब सरकार तुम्हारे लिए ट्रैकर हट बनाने वाली है, ऊपर मून पीक के पास एक रेस्ट हॉउस भी बनने वाला है.

कल शायद यहां रोप-वे या फिर कोई हैली पैड बन जाये. तुम फिर सैकड़ों से हज़ारों में आओगे. गांव के लड़के अपनी पढ़ाई बीच में छोड़कर गाइड बनने लग पड़े हैं. वे अब खेतों में काम नहीं करते, उनके सपनों में बदलाव आ रहा है, तुम लोगों ने उनके ज़िंदगी में बेवजह दखल दे दिया है, ठीक जैसा तुमने प्रकृति, पहाड़ की ज़िंदगी में डाला है.'' मर्सीडीज़ दीपक की बातों से दुखी हो गयी पर वह तर्क के साथ बोली,''तो क्या तुम ऐसे ही ग़रीब भेड़ पालक बने रहना चाहते हो? तुम क्या ज़िंदगी नहीं जीना चाहते हो, क्या तुम्हारी इस फटेहाल ज़िंदगी से आगे भी कुछ है उसे देखना, पाना नहीं चाहते हो?''

दीपक मर्सीडीज़ की आंखों में देखकर बोला,''कैसी ज़िंदगी मैम,जब ईश्वर ने हमें प्रकृति के बीच में पैदा किया, हमारे लिए रहन-सहन खाने-पीने का इंतज़ाम किया तो फिर हम कौन–सी ज़िदगी जियेंगे. ये जंगल हमें सब कुछ देता है लकड़ियां, जड़ी-बूटियां, औषधियां. खेत अनाज उगा रहे हैं हर साल, नदी हर दिन पानी से लबालब है, मौसम अपनी चाल में अपनी कृपा बरसा रहे हैं तो हम कौन–सी ज़िंदगी जीना चाहेंगे, मुझे यही समझ नहीं आता! मुझे तो असली दुख यही है कि हमारे गांव की संस्कृति अब पर्यटन संस्कृति बन रही है, गांव के लड़के तुम्हारे बड़े-बड़े बैगों को उठा रहे हैं, तुम्हारे साथ टूटी–फूटी अंग्रेज़ी बोल कर कुछ पैसे ऐंठ रहे हैं. वो रोज़गार के सपने देख रहे हैं, वो सड़क के किनारे ढाबे डाल रहे हैं. वे अब जंगल नहीं जाते, नदी के किनारे नहीं जाते, वो अब तुम्हारे लिए हर सुविधा के बदले पैसे के सपने देखते हैं और कइयों के सपने तो पूरे भी हो रहे हैं. गांव की तस्वीर बदल रही है यह आख़िरी गांव अब पर्यटकों की गाड़ियों की धूल में हमेशा नहाने लग पड़ा है.''

मर्सीडीज़ अब दीपक की बातों से परेशान हो चुकी थी उसे समझ नहीं आ रहा था कि दीपक कौन-सी दुनिया की बातें कर रहा है, क्या वह एक विद्रोह की चिंगारी को सुलगा रहा है? वह प्रकृति प्रेम में मानवीय जीवन की प्रकृति ही नहीं समझ पा रहा है. वह बोली, ''दीपक मैं तुम्हारे मन की व्यथा समझ रही हूं पर आख़िर तुम भी धारा प्रवाह अंग्रेज़ी बोलने वाले, अच्छी शिक्षा के लिए इस गांव के स्कूल से दूर कॉलेज़ तक गये होगे, यह भी परिवर्तन का हिस्सा था, क्या तुम पढ़े-लिखे नहीं होते तो तुम्हारी सोच कुछ और होती, तुम नयी सुविधाएं लेने के बाद प्रकृति प्रेम की बातें कर रहे हो! क्या तुम अनपढ़ ही बने रहना चाहते थे? अब तुम्हारे विचार सुने जा रहे हैं वर्ना यहां कई देहातियों की ओर हम कभी ध्यान से देखते भी नहीं.''

दीपक अपने तर्क के साथ फिर बोल पड़ा, ''नहीं मर्सीडीज़! मैं यह कहना चाहता हूं कि ये बदलाव हम प्रकृति के विरुद्ध जा कर कर रहे हैं. क्या गद्धी लोग जो पहाड़ों, चरागाहों, नदी, नालों में अपनी रेवड़ के साथ खाक छानते हैं ये ठीक काम नहीं कर रहे, ये प्रकृति के संग जी रहे हैं. इन्होंने पूरा जीवन यही काम किया फिर इनकी औलादों ने इनके काम से नफ़रत पाल ली. वे शिक्षा, विस्तार, परिवर्तन के सपने देखने लगे, उनकी भेड़ें-बकरियां धीरे-धीरे ख़त्म हो गयीं. वे औलादें या तो किसी की नौकर बन गयीं या फिर बेरोज़गारी के पहाड़ में दब गये. उनके लिए यही पहाड़ नदियां, घाटियां ही अभिशाप नज़र आने लगीं. वे अपनी मानसिकता के भ्रम में फंसते गये. उन्होंने नयेपन के सपने में सब कुछ छोड़ दिया. अब वे सपनों के अलावा कुछ नहीं सोचते, वे मतिभ्रम में जी रहे हैं. क्या उन्हें प्रकृति ने अभी भी अपना पुत्र नहीं माना है.''

मर्सीडीज़ बोली,''देखो दीपक! तुम्हारे लिए तो प्रकृति मेहरबान है, पर क्या बीहड़ों, रेगिस्थानों में रहने वाले भी यहीं गलते–सड़ते रहें, उनके लिए परिस्थितियां भिन्न हैं. मैं कई सुनसान जगहों में गयी हूं जहां लोग प्रकृति से भी कुछ नहीं पाते, वे नारकीय जीवन जी रहे हैं.'' दीपक ने अपना तर्क नहीं छोड़ा, ''मुझे लगता है कि उन्होंने जीने की कला छोड़ दी होगी, क्या रेत के सांप को कुछ खाने-पीने को नहीं मिलता, क्या वह रेत छोड़ देता है, क्या खारे पानी की मछलियां मीठे पानी की झीलों के सपने देखती हैं? या बीहड़ो में जंगली पौधे नहीं उगते?''

मर्सीडीज़ अब फिर दीपक की बातों से बेबस नज़र आ रही थी, उसने अपने सिर के ऊपर से चांद को गुज़रते देखा और उठ खड़ी हुई. ''मुझे भूख महसूस हो रही है मेरे बैग में कुछ खाने-पीने का सामान है, मैं बाहर ले आती हूं.'' दीपक ने उसे एकदम रोक दिया, ''बस आप एक दो मिनट रुकें, मैंने आपके खाने लायक कुछ बनाया है.''

वह पत्तागोभी की सब्ज़ी व अपने हाथों से बनी मोटी चपातियों को एक पुरानी-सी एल्यूमीनियम की प्लेट में लाकर मर्सीडीज़ के लिए आग के अंगारों में गर्म करने लगा. ''ये सब्जी इन्हीं खेतों से निकलती है यह तुम्हारे खाने में सही होगी. तुम चखो तो सही. मैंने अपने लिए बनायी थी. तुम्हारे बैग में तो शायद चाकलेट, ब्रेड, सूप वग़ैरह होगा.''

मर्सीडीज़ छोटे-छोटे चपाती के टुकड़ों को सब्ज़ी के साथ खाती रही और खाते हुए बोलती रही, ''ये स्वादिष्ट है पर मुझे लगता है दीपक कि तुम्हें अपने मन को समझाना होगा, तुम्हें समझौता करने की आदत डालनी होगी, तुम बहुत सोचते हो ओर यही ज़्यादा सोच तुम्हारे लिए तो ठीक है पर दूसरों की नज़रों में तुम्हें पागल-सा घोषित कर देगी. मैं तो कहती हूं तुम अगर ऐसे ही जीना चाहते हो तो जीओ पर दूसरों को अपने हिसाब से जीने दो, वे तुम्हारे रास्ते पर नहीं चलेंगे. वे बदलाव के स्वप्न संसार की रचना कर चुके हैं. मैं भी उसी का हिस्सा हूं. पर हां चिंतन करती रहूंगी, तुम एक अच्छे विचारों वाले नौजवान हो पर मैं अपने ख़्यालों में जीना चाहती हूं. मैं घूमना चाहती हूं इस दुनिया के अथाह रास्तों पर चलना चाहती हूं, इसके सिवा मैं और कुछ नहीं सोचती पर तुमने मेरी सोच में ज़बरदस्त दख़ल दे दिया है, तुमने कुछ अलग विचारों के बीज मेरे मन मस्तिष्क की गीली मिट्टी में फेंक दिये हैं, अब देखती हूं कि वे अंकुरित होते हैं या फिर नहीं.''

दीपक उसे धीरे-धीरे खाता और बोलते देखता रहा. मर्सीडीज़ फिर बोली, ''दीपक मैं तुमसे एक निजी सवाल पूछना चाहती हूं अगर तुम्हें बुरा न लगे. क्या तुम शादी करके अपनी पत्नी को ऐसे ही अपनी इस झोपड़ी में रखोगे, क्या उसकी उम्मीदें, इच्छाओं का इससे हनन नहीं होगा, शायद वह तुम्हारी तरह जीना नहीं चाहेगी तो फिर तुम क्या करोगे.''

दीपक हंस दिया और बोला, ''तो फिर शादी ही नहीं करूंगा, तुमने मुझे सचेत कर दिया, मैं तुम्हारा धन्यवादी हूं.'' मर्सीडीज़ को लगा कि वह एक साधु जैसे नौजवान की ज़िंदगी में दख़ल दे रही है. वह खाना खाते वक़्त सोचती रही कि उसके जैसी युवती अगर ऐसे प्रकृति प्रेमी के हिस्से में आ जाये तो फिर शायद उनकी ज़िंदगी कुछ दिनों तो अच्छी चलेगी. वे इस धरा के नज़ारों को देखेंगे, घूमेंगे, रेवड़ों को हांकेंगे, फिर वे सब सुविधाओं को त्यागते जायेंगे, वे फिर से ऐसी ज़िंदगी में चले जायेंगे जिससे निकलने के लिए इंसानों ने वर्षों लगा दिये. क्या वे सब बेवकूफ़ हैं या फिर दीपक बेवकूफ़. उसे फ़ैसला करना था कि क्या सही है पर वह फ़ैसला नहीं कर पायी. उसे लगा वह भी दीपक की बातों से भ्रमित हो गयी है. उसका मन अभी इतना मज़बूत नहीं हुआ है कि वह फ़ैसला कर ले.

उसे लगा, नहीं वह तो बहुत ही कमज़ोर युवती है. उसका मन कर रहा था कि दीपक जैसे संन्यासी के क़दमों में गिर जाये और उससे कई वर्षों तक बातें करती रहे. उससे मन में उठे हर प्रश्न का जबाब पूछती रहे. वह अपने आप को इतना विनीत ज़िंदगी में पहली बार महसूस कर रही थी. दीपक ने उसकी आत्मा को उसकी आंखों के सामने ला खड़ा कर दिया था. वह अब उस आत्मा के स्वरूप को समझने की कोशिश कर रही थी. फिर मन में एक लहर उठी और उसने अपने आपको उस लहर के आगे नतमस्तक कर दिया. वह हार गयी एक हिंदुस्तानी युवा लड़के के सामने. दीपक ने उसको चंगुल से निकाल दिया, ''हम सुबह तड़के मून पीक के कैंप की ओर रवाना होंगे, अब तुम सो जाओ मर्सीडीज़. पेनकिलर खा लो जो शायद तुम्हारे पास होगा और पट्टी को बांधे रखना.'' शुभ रात्रि के साथ ज़मीन के सहारे मर्सीडीज़ नींद के आगोश में चली गयी. वह स्वप्न में एक हिंदु राजकुमार के संग अरावली पर्वत के अनोखे रास्तों की सैर को निकली थी, उसे लग रहा था कि उसका मन व आत्मा हिंदू राजकुमारी जैसी थी पर सोच में एक स्पैनिश लड़की जैसे विचार व दृष्टिकोण था. वह एक हिंदू मित्र राजकुमार के साथ उसके इतिहास व सभ्यता की बातें, चर्चा करती रही.

सुबह तड़के ही मर्सीडीज़ को दीपक ने उठा दिया. अभी शायद वो फिर किसी सपने में थी जो अब किसी फ़िल्म के रील रुक जाने पर अंधेरे में बदल गया था. सुबह बकरी के दूध की चाय पीकर वो चढ़ाई चढ़ने लगे. रास्ते में दीपक उससे कोई बात नहीं कर रहा था. दोनों अपने पुराने वार्तालाप के जंजाल से निकलकर मन को अनजानी राहों की तलाश में लगा रहे थे. घंटे भर के बाद एक तीखी चढ़ाई के बाद मून पीक का नज़ारा उनकी आंखों के सामने था.

ग्रेनाइट के पत्थर व चट्टानों पर चांद की रोशनी चित्रकारी कर रही थी. मर्सीडीज़ बोली,''ओह माइ गॉड! इस अदभुत नज़ारे के लिए मैं इस कठिन चढ़ाई की योजनाएं बनाती आ रही थी, धन्यवाद दीपक, तुम्हारे कारण और तुम्हारी प्लानिंग ने मुझे यह अहसास करवा दिया कि मैंने चोट के बाद कुछ खोया नहीं है.''

दीपक मुस्करा दिया. वह बोला, ''मैं यह गाइड जैसा काम कभी नहीं करना चाहता था. पर फिर भी मुझे आख़िरी बार तुमने गाइड बना ही दिया, मैंने कभी गाइड न बनने का प्रण लिया था पर तुम्हारे कारण मैं मज़बूर हुआ था शायद

ईश्वर व प्रकृति दोनों ने ऐसा ही कोई प्रंपच रचाना था.'' वह मून पीक को देखता रहा पल भर. आगे घाटी पसरी थी. बेस कैंप के टेंट से आती एक रोशनी की लकीर साफ़ देखी जा सकती थी. सुबह का चांद अपनी बची-खुची रोशनी को वहीं छोड़कर सोने की तैयारी करने वाला था. दीपक का मन रात के वार्तालाप से परेशान हो रहा था, उसे लग रहा था कि जैसे उसने अपने विचारों के संताप से एक चंचल आधुनिक विदेशी लड़की के मन को बेवजह पीड़ा दे दी हो, उसे आत्म ग्लानि हो रही थी.

मर्सीडीज़ दीपक के हाव-भाव पहले ही पढ़ चुकी थी. वह अब फिर से अपने चेहरे से चांद की रोशनी को उतार कर दीपक के विचारों के अंधेरे को ओढ़कर बोली, ''मुझे पता है दीपक तुम क्या सोच रहे हो, तुम अपने विचारों से ख़ुद ही पीड़ित महसूस हो रहे हो. जब तुमने सब सच्चे मन से मुझसे शेयर किया है तो फिर पश्चाताप में क्यों जल रहे हो? तुममें हिम्मत, विश्वास होना चाहिए कि तुम ठीक कह रहे हो, तुम में ज़िद्द होनी चाहिए कि तुम ठीक हो. वर्ना यह सब बेकार है अपने विश्वास पर क़ायम रहो, हे बहादुर नेक दिल दीपक!''

दीपक और मर्सीडीज़ कैंप में पहुंच गये. पूरा दल तब तक उठ चुका था. वहां लगभग १०-११ टेंट लगे थे और कुछ लोग भी थे, कुछ विदेशी और कुछ लोकल. मून पीक की चोटी की चढ़ाई में मदद करने वाले गाइड व सहायक. ऊपर एक अलग ही दुनिया थी. मर्सीडीज़ को वहां पहुंचा देखकर पूरा दल ख़ुश हो चुका था और दीपक के कानों में दर्ज़नों धन्यवाद भरे शब्द आ रहे थे. दीपक वापिसी की तैयारी में चलने को हुआ. मर्सीडीज़ ने उससे मोबाइल नंबर लेना चाहा जो दीपक के पास नहीं था. मर्सीडीज़ ने आख़िरी बार धन्यवाद से दीपक को बाय-बाय कहा.

कोई सात-आठ वर्ष बीत गये. मर्सीडीज साल-छ: महीने के बाद अपने गाइड कमल से दीपक का हाल-चाल पूछती रही थी. वह कई बार कमल के जरिए दीपक से भी बात करती रही थी. वह ख़ुश होकर दीपक को बताती थी कि वह दीपक के विचारों पर एक उपन्यास लिख रही है जो एक प्रकृति प्रेम के लिए पागल लड़के की ज़िंदगी के आस-पास घूमता है, इसकी पृष्ठभूमि भारतीय ही है. वह इससे पहले भी कई बार कमल से दीपक के जीवन के कई अनछुए पहलुओं पर कई बातें जानती रही थी. इस बार उपन्यास का विमोचन होते ही उसने दीपक से बात करने के लिए कमल को जैसे ही फ़ोन किया. कमल ने उसे एक अति दुखद समाचार सुनाया, ''मैडम दीपक और उसकी भेड़ें अब इस जहान में नहीं हैं. इस बरसात में एक भयानक बादल मून पीक के पास फटा और तेज़ पानी के बहाव में दीपक और उसकी भेड़ें करोड़ों टन मलबे में दब गयीं. अब न दीपक की झोपड़ी बची है और न ही उसकी ज़मीन. बड़ा भयानक नज़ारा है वहां का, अब तो कोई विदेशी ट्रैकर भी वहां नहीं आता है.

वे मून पीक के लिए दूसरे ट्रैक से जाने लगे हैं. जिस रास्ते से हम मून पीक के लिए जाते थे वो तो बादल फटने से गिरे पहाड़ में कहीं खो गया है. वह रास्ता अब सुरक्षित नहीं है, किसी गाइड ने उस रास्ते के बजाये नये रास्ते की ओर से कुछ पर्यटकों को ले जाना शुरू कर दिया है. अब शायद कुछ वर्षों बाद पहले-सा माहौल बन जाये, पर दीपक का गांव अब ट्रैक गूगल के मैप रास्ते से भी हट गया है. मर्सीडीज़ ने फ़ोन सुनकर एक दुख भरी लंबी सांस ली. उसकी तीन साल की बेटी उसके पास आकर बोली, ''क्या हुआ मॉम, क्या हुआ?

मर्सीडीज़ बोली, ''तुम्हारे इंडियन हीरो अंकल दीपक जिसके नाम पर मैंने प्रकृति प्रेम पर उपन्यास लिखा है, वह अब सचमुच ही प्रकृति के रास्ते की बाधा बन गया था, इसलिए प्रकृति ने उसे अपने रास्ते से हटा दिया है.'' नन्हीं मारिया को कुछ समझ नहीं आया और वह अपनी मॉम के कमरे से दूसरे कमरे में चली गयी. वह वहां पड़े एक खिलौने से खेलने लगी. मर्सीडीज़ की आंख़ों में उस भारतीय टूर के दृश्य, बिताये पलों को परत दर परत खोलते हुए तैरने लगे जो उसने दीपक के साथ बिताये थे. उसके बाद उसके उपन्यास में हीरो बने दीपक के इर्द-गिर्द बिताये हर पल उसकी आंखों में आंसू की बरसात को न्यौता देने लगे. वह सोचने लगी – क्या किसी हीरो के साथ ऐसा भी हो सकता है? प्रकृति क्या ऐसी भी होती है? प्रकृति क्या ऐसी होती है...! पहाड़ का देवता सचमुच क्या दीपक से ही नाराज़ हो गया था.

हाउस न. ६१८, वार्ड न. १,
कृष्णा नगर, हमीरपुर,
(हिमाचल प्रदेश)-१७७००१
मो. :९४१८१७८१७६

धुंध छटने के बाद

गोविंद उपाध्याय

१५ अगस्त, १९६० (कानपुर). साढ़े तीन दशक से भी ज़्यादा समय से कहानी लेखन में सक्रीय. देश की लगभग सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कहानियों का निरंतर प्रकाशन. कुछ कहानियों का बांग्ला, तेलुगू, ओडिया, कन्नड़ और उर्दू में अनुवाद.

: कृतियां :

पंखहीन, समय, रेत और फूकन फूफा, सोनपरी का तीसरा अध्याय, चौथे पहर का विरह गीत, आदमी, कुत्ता और ब्रेकिंग न्यूज़, बूढ़ा आदमी और पकड़ी का पेड़, नाटक तो चालू है. चुनी हुई कहानियां, बड़े कद के लोग, घोसला और बबूल का जंगल, तुम ऐसी तो नहीं थी तथा एक टुकड़ा सुख. (बारह कहानी संग्रह).

: संप्रतिः

रक्षा प्रतिष्ठान में नौकरी.

वह जिसे आज तक जीवन की मामूली-सी घटना समझ रही थी. वह आज एक विशालकाय दैत्य बन चुका था. इतना बड़ा कि वह चाहकर भी अपनी मानसिक स्थिति को संभाल नहीं पा रही थी. कई बार तो दीपेन ही पूछ चुका था, 'क्या हुआ मानसी...एनी प्रॉब्लम...? कुछ परेशान-सी दिख रही हो.' ऑफ़िस में भी कई लोगों ने टोका, 'मानसी तू बीमार-बीमार सी लग रही है. सब ठीक तो चल रहा है. कैसी होती जा रही है तू...'

जब भी वह आइने के सामने खड़ी होती है, तो लगता है कि प्रतिबिंब में कोई अपरचित चेहरा है. आंखों के चारों तरफ़ काला घेरा. कांतिहीन चेहरा. माथे पर ढेर सारी सिलवटें... आख़िर कब तक वह इस यातना को झेल पायेगी. दस दिन से लगातार वह अकेले ही अपने आप से लड़ रही थी. ग़लती भी तो उसकी अपनी है. तब उसे कहां मालूम था कि आगे चलकर इसका भयानक रूप देखना पड़ सकता है.

कहीं भास्कर ही तो नहीं है, इन सब के पीछे... आख़िर अब वह क्या चाहता है. उसी ने तोड़ दिये थे वे सारे सपने, जो उन्होंने साथ-साथ देखे थे. तीन वर्षों का साथ एक झटके में समाप्त हो गया, 'मानसी मुझे ग़लत मत समझो. हम अच्छे दोस्त हैं. तीन साल का हमारा संबंध है. मैंने तुम्हें जीवन साथी के रूप में कभी नहीं देखा. मैंने बहुत सोचा. हम दोस्ती तक ठीक हैं. लेकिन पति-पत्नी... नहीं बन सकते.'

मानसी को धक्का लगा था. तो क्या भास्कर उसे सिर्फ़ इस्तेमाल कर रहा था. नहीं भास्कर ने कभी उससे विवाह का वादा नहीं किया. यह तो सिर्फ़ मानसी समझती रही थी. वह जल्द से जल्द भास्कर को भूल जाना चाहती थी. यह बात जब घर वालों को पता चली तो उन्होंने मानसी के लिए रिश्ता खोजना शुरू कर दिया. अभी तक वे यही सोचते थे कि भास्कर और मानसी एक दूसरे को पसंद करते हैं. इसलिए आज नहीं तो कल दोनों शादी कर लेंगे. जब उन्हें पता चला कि भास्कर ने इंकार कर दिया है तो चिंतित होना स्वभाविक था. मानसी मार्केटिंग में थी. भास्कर उसी कंपनी में कंप्यूटर प्रोग्रामर था. वह दो साल पहले पूना आया था. वे कंपनी के कैफ़ेटेरिया में मिले थे. मानसी को लगा कि कोई दुबला-पतला लड़का उसे लगातार देखता है. वह लड़का अकेला ही होता है. फिर एक दिन

वह मानसी के सामने आकर बैठ गया, हैलो... मैं भास्कर... टेक्निकल डिपार्टमेंट से... आप मानसी हैं मार्केटिंग से... दो महीने पहले ही आपने ज़्वाइन किया है.'

वह हंसा. उसके आगे के दो दांतों के बीच गैप था. उसके बाल बहुत छोटे थे और आगे की तरफ़ के झड़ गये थे. जिसकी वजह से वह अपनी उम्र से थोड़ा ज़्यादा लग रहा था. मानसी उसकी बात सुनकर मुस्करायी. उसने हाथ में पकड़ी प्लेट मेज़ पर रख दी. उसमें चिकन राइस था. यह इत्तफ़ाक की बात थी कि मानसी भी वही खा रही थी. उसने मानसी से पहले ही खा लिया था. उसके बाद वह काउंटर पर गया. लौटते वक़्त उसके हाथ में दो काफी के मग थे. एक उसने उसके सामने रख दिया. मानसी ने उसकी तरफ़ प्रश्नवाचक नज़रों से देखा, 'यह आपका है. मुझे मालूम है कि आप भी काफी ही पीती हैं. कल आप मुझे पिला दीजियेगा.'

भास्कर कम बोलता था. हंसता भी बहुत कम था. ज़्यादातर वह उत्तर में मुस्करा देता था. देखते ही देखते भास्कर उसका दोस्त बन गया. भास्कर कोई नशा नहीं करता था. न शराब... और ना ही सिगरेट... वह अपने मां-बाप का इकलौता लड़का था. उसके माता-पिता दोनों डॉक्टर थे. वे चाहते थे कि बेटा भी डॉक्टर बने, लेकिन वह इंज़ीनियर बन गया. वह तीन साल अमेरिका में रहा था. वह यहां चौबीस लाख सालाना के पैकेज़ पर था. उसके पास अपना फ़्लैट... कार सब कुछ था. मानसी उसके आगे कुछ भी तो नहीं थी. वह वूमेन्स हॉस्टल में रहती और सालाना पांच लाख का पैकेज़ था. कुछ इंसेंटिव और मिल जाता था. वह भी डेढ़ लाख से ज़्यादा नहीं होगा.

अब वे दोनों मित्र थे. भास्कर उसे कभी-कभी हॉस्टल तक छोड़ आता था. फिर वह साप्ताहांत साथ-साथ बिताने लगे. मानसी की मां आयीं तो भास्कर ने छुट्टी लेकर उन्हें पूरा पूना घुमाया था. शाम का डिनर तीनों साथ ही करते. मम्मी भास्कर से काफ़ी प्रभावित हुई थीं. उसने मानसी से पूछा था, 'यह तुम्हारा सिर्फ़ दोस्त ही है या फिर...'

मानसी के पास उस समय इसका कोई जवाब नहीं था. वह मां की बात पर सिर्फ़ हंस दी थी. मां ने जब ज़्यादा जोर दिया तो बस इतना ही बोल पायी थी, 'नहीं मम्मा...मैं अभी आपको कुछ भी स्पष्ट नहीं बता सकती. क्योंकि अभी मेरा ज़्यादा ध्यान अपने कॅरियर की तरफ़ है. तुम तो जानती हो यदि टारगेट पूरा नहीं हुआ तो नौकरी पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ेगा.'

मां, मानसी की बातों से संतुष्ट नहीं थी. अचानक वह गंभीर हो गयी, 'मानसी...भास्कर अच्छा लड़का है. उस तरफ़ भी सोचो. समय बदलते देर नहीं लगती.'

डेढ़ साल तक वे सिर्फ़ मित्र ही बने रहे थे. लेकिन उसके बाद उनमें अंतरंगता बढ़ती गयी. और एक समय ऐसा भी आया जब वे सारी सीमाएं लांघ गये. तब वह दोनों के लिए एक खेल ही था. भास्कर तो इस खेल में कुछ और आगे तक निकल गया. वह अपने फ़्लैट में लगे वेब कैम पर उन अंतरंग पलों को रिकॉर्ड करने लगा. तब तो मानसी ने भी उसे नहीं रोका था. वह ख़ुद तमाम तरह के पोज़ देती थी. ऐसा करना उसे रोमांचित करता था. यही भास्कर के साथ रहा होगा.

यह वही समय था. जब उसने अपनी मां को बोला था, 'मम्मा... अब हम अपने संबंधों को लेकर गंभीर हैं. मैं भास्कर को ख़ुद प्रपोज़ करने जा रही हूं.'

पर भास्कर बिलकुल गंभीर नहीं था. मानसी के लिए यह एक बड़ा झटका था. उसने भास्कर से संबंध समाप्त कर दिये. उसी समय दीपेन का रिश्ता आया. दीपेन भी पूना में ही था. मां के कहने पर वह दीपेन से मिली और उसने शादी के लिए 'हां' कर दिया. दीपेन भी हॉस्टल में रहता था. दोनों को मिलाकर इतनी आमदनी थी कि वे वन बी. एच. के. फ़्लैट में शिफ़्ट हो सकते थे.

ठीक ही तो चल रही थी ज़िंदगी. दीपेन अच्छा पति था. उसका पूरा ख़्याल रखता था. सब कुछ बढ़िया चल रहा था. भास्कर धीरे-धीरे अतीत में चला गया था. उसकी यादें अब धुंधली पड़ने लगी थीं. शादी से कुछ दिन पहले ही मानसी ने उस कंपनी को छोड़ दिया था. वह उस वातावरण से दूर हो चुकी थी, जहां से भास्कर की यादें जुड़ी थीं.

लेकिन वह अतीत अचानक जहरीला हो गया. जिसे वह बहुत छोटी–सी बात समझ रही थी, वह अचानक किंग कोबरा बन गया था. जो उसके सारे वजूद को विषाक्त करने पर तुला था.

वह छुट्टी का दिन था. मानसी टी. वी. पर सीरियल देख रही थी. दीपेन किचन में मटन पका रहा था. जिसके भुनने की ख़ुशबू मानसी तक आ रही थी. दीपेन नानवेज़ अच्छा बनाता था. उस समय बहुत अच्छा मूड था मानसी

का... तभी उसके मोबाइल पर किसी अज्ञात नंबर से व्हाट्स ऐप पर कुछ तस्वीरें आयीं. मानसी ने उत्सुकतावश उन तस्वीरों को लोड किया और सन्न रह गयी. वे तस्वीरें उसी की थीं. भास्कर के साथ अंतरंग क्षणों की तस्वीरें. उसके हाथ कांपने लगे थे. एक अजीब-सा भयभीत कर देने वाला ख़्याल उसे सताने लगा. ये तस्वीरें यदि दीपेन ने देख लीं तो...

उसने दोबारा उन तस्वीरों को देखा. नीचे कुछ लिखा भी था, 'अभी से मत घबराइए मैडम. ऐसी बहुत-सी तस्वीरें और वीडियोज़ हैं मेरे पास. सचमुच आपका शरीर लाजवाब है.'

उसको लगा कि कमरे का तापमान अचानक बढ़ गया है और ए. सी. ने काम करना बंद कर दिया है. अचानक उसका शरीर पसीने से भीगने लगा था. उसका दिमाग़ मानो सुन्न हो गया था. कौन हो सकता है? कहीं यह भास्कर की तो हरकत नहीं है? लेकिन उसे ऐसा करने से भला क्या मिलेगा. तभी दीपेन आ गया. उसे देखकर चौंका, 'क्या हो गया? तुम इतनी घबराई हुई क्यों हो. तुम्हारी तबियत तो ठीक है.'

इस प्रश्न का कोई जवाब नहीं था मानसी के पास.

वह पूरे दिन सहमी-सहमी सी रही. मोबाइल पर कोई भी नोटिफ़िकेशन आता, वह चौंक जाती. दो दिन बीत गये. डर का कीड़ा धीरे-धीरे सुस्त होने लगा था. तभी फिर कुछ और तस्वीरें आ गयीं. वो तस्वीरें और ज़्यादा अंतरंग थीं. एक छोटा-सा वीडियो क्लिप था. भास्कर और वह... पूरी क्लिप को देखने की वह हिम्मत ही नहीं जुटा पायी. नीचे मैसेज़ टैग था — 'कैसी हैं मैडम. यह आपकी ही तस्वीरें हैं. सोचता हूं, इसे सोशल मीडिया पर लोड कर दूं. इतनी शानदार तस्वीरों का लुफ़्त उठाने का सभी को हक़ बनता है. कैसा रहेगा...'

मानसी अपना धैर्य खोने लगी थी. वह कमरे में अकेली बैठी थी. उसने उस अज्ञात नंबर को मिलाया. बहुत देर तक घंटी बजती रही, किंतु किसी ने बात नहीं की. तीन-चार कॉल के बाद वह मोबाइल पलंग पर रखकर फफक पड़ी. वह स्वयं को बहुत बेबस पा रही थी. सोशल मीडिया में इन तस्वीरों के आने के बाद उसका सब कुछ समाप्त हो जाना था. निजी और सामाजिक जीवन सब कुछ...

मानसी ने न चाहते हुए भी भास्कर को फ़ोन मिलाया. भास्कर का गंभीर स्वर उसके कानों में सुनाई दिया, 'गुड ईवनिंग मानसी... कैसे याद किया?'

मानसी ने बिना किसी औपचारिकता के सवाल दाग दिया, 'यह खेल बंद कर दो भास्कर. नहीं तो मैं पुलिस के पास जाऊंगी. मैं तुम्हें नहीं छोडूंगी. यह मेरे अकेले की बर्बादी की कहानी नहीं होगी.'

'क्या मतलब... तुम क्या कहना चाहती हो? मैं समझ नहीं पा रहा हूं. मानसी क्या हो गया है तुम्हें?'

'भास्कर... मेरे व्हाट्स एप पर हमारी तस्वीरें सैंड की जा रही हैं. उन्हें सोशल मीडिया पर शेयर करने की बात कही जा रही है. तस्वीरें तो तुम्हारे पास थीं. ज़ाहिर है यह तुम्हारा ही कारनामा है.' मानसी अभी आगे कुछ और कहती इसके पहले ही भास्कर ने बात काट दी, 'तो करने दो न क्या फ़र्क पड़ता है.'

'वह तुम्हारे बेड रूम की तस्वीरें हैं. तुम अच्छी तरह जानते हो, वे कैसी तस्वीरें हैं... मेरा सब कुछ नष्ट हो जायेगा.' इस बार मानसी की आवाज़ भर्राई हुई थी.

'ओह माई गॉड... मैं समझ गया. मानसी मेरा यक़ीन करो मैंने ऐसा कुछ भी नहीं किया है. तीन महीने पहले मेरा लैपटॉप चोरी हो गया था. मेरे बैग में था. मुंबई से लौटते समय कुछ देर के लिए निकाला भी था. लेकिन याद नहीं कहां मिस हो गया. मैंने ऑनलाइन एफ. आई. आर. भी की थी. उसके बाद भूल गया. पर ऐसा होगा, मैंने सोचा भी नहीं था. तुम मुझे मैसेज़ वाला फ़ोन नंबर भेजो. मैं कोई हल ज़रूर निकाल लूंगा. मुझे अपडेट देती रहना. घबराना बिलकुल नहीं. सब ठीक हो जायेगा.'

मानसी ने उसे नंबर मैसेज़ कर दिया. वह सोचने लगी. भास्कर सही कह रहा है. वह तीन साल उसके साथ बिता चुकी थी. बहुत शानदार दिन थे. उसने जब विवाह से इनकार कर दिया, वह तब भी उसे दोषी नहीं मानती थी. उसने कभी उससे शादी का वादा तो किया ही नहीं था. वह तो मानसी की एक तरफ़ा सोच थी. भास्कर ने कभी उससे शारीरिक संबंधों के लिए भी दबाव नहीं बनाया. यह उनकी आपसी सहमति थी. तब तो मानसी यही समझती थी कि भास्कर सिर्फ़ उसका है.

मानसी को हर क्षण यह भय सताता रहता कि किसी भी समय वह अनजान व्यक्ति उसकी तस्वीरें अपलोड कर सकता है. उसने दोबारा भास्कर को भी फ़ोन नहीं किया. भास्कर का भी कोई फ़ोन नहीं आया था. दीपेन को जब पता चलेगा तो उस पर क्या बीतेगी. मानसी की मानसिक स्थिति

ख़राब होती जा रही थी. जिसका दुष्प्रभाव अब धीरे-धीरे उसके शरीर पर भी दिखने लगा था.

ठीक ग्यारहवें दिन उसका मैसेज़ आया था. वह ऑफ़िस के लिए निकल रही थी. इस बार तस्वारें नहीं भेजी थीं. मानसी ने पढ़ा तो उसे उस अज्ञात व्यक्ति का इरादा समझ आ गया — 'मैडम मैं सोच रहा हूं, ये तस्वीरें नष्ट कर दूं. सोशल मीडिया में अपलोड करने से आप बहुत बड़ी मुसीबत में फंस जायेंगी. कितनी बड़ी मुसीबत होगी. यह तो आप मुझसे ज़्यादा जानती हैं. लेकिन मुझे क्या मिलेगा ...? यदि इन्हें मैं नष्ट कर दूंगा तो आप मुझ पर कुछ तो मेहरबान होंगी. न आप ग़लत समझ रही हैं. मुझे पैसा नहीं चाहिए. मुझे तो बस आप चाहिए. वैसे ही जैसा कि इन तस्वीरों में दिख रही हैं. तो कल का संडे 'नचिकेता' में मिलते हैं. बाक़ी आपकी मर्ज़ी... तो मिलते हैं शाम को सात बजे...'

मानसी ने न चाहते हुए भी भास्कर को यह मैसेज़ फॉर्वर्ड कर दिया. थोड़ी देर बाद ही उसका फ़ोन आ गया, 'घबराओ मत मानसी. जैसा वह कह रहा है. वैसा करो. तुम नचिकेता पहुंचो.'

मानसी के पास चौबीस घंटे का समय था. हर क्षण उसके लिए भारी पड़ रहा था. वह ब्लैक मेलर उसका शरीर चाहता है. तो क्या वह उसे अपना शरीर सौंप देगी. कदापि नहीं... उसके पास आख़िर विकल्प भी क्या बचा है...? वह अपने मन को समझाती, ऐसा कुछ नहीं होगा...

वह आया. चेचक के दागों से भरा था उसका चेहरा. रंग साफ़ था. वह गोलमटोल-सा पांच फ़ुट का आदमी था. यदि वह नहीं बताता तो मानसी को विश्वास ही नहीं होता कि यह ब्लैकमेलर है. वह रेस्टोरेंट पहुंची ही थी कि लपककर उसके पास आ गया, 'हैलो मानसी. मैं शेखर... आप सात मिनट लेट हैं. आप हॉल में थोड़ी देर बैठना पसंद करेंगी या फिर ऊपर रूम में चलेंगी.'

'वह कहीं नहीं जायेगी श्रीमान आनंद शेखर. आप हमारे साथ चल रहे हैं.' अब उस ठिगने की घबड़ाने की बारी थी. मानसी चौंक गयी. शेखर के पीछे एक अनजान आदमी खड़ा था. 'चिंता मत कीजिए मैडम आप सुरक्षित हैं.' वह एक पुलिस वाला था. पार्किंग के पास भास्कर खड़ा मिला. ठिगने को देखकर मुस्कराया, 'आइए शेखर बाबू. प्रोग्रामर से क्रिमनल बनने की बधाई. अब सड़िए जेल में...'

शेखर के होंठ फड़फड़ा कर रह गये. वह कुछ बोलने की स्थिति में ही नहीं था.

शेखर ने मानसी को जाने का इशारा किया, 'तुम जाओ मैं बाद में कॉल करता हूं.'

मानसी घर पहुंची तो दीपेन काफ़ी परेशान दिखा, 'कहां चली गयी थीं यार मैं बहुत देर से तुम्हें कॉल लगा रहा था.' मानसी ने मोबाइल देखा, दीपेन के आठ कॉल पड़े थे.

बाद में भास्कर ने उसे हुई असुविधा के लिए क्षमा मांगी. आनंद शेखर उसका सहकर्मी था. मानसी के ब्लैकमेल की बात से भास्कर को समझते देर नहीं लगी कि यह कार्य किसी परिचित का है. क्योंकि इतनी बड़ी दुनिया में लेपटॉप चोर को मानसी के बारे में भला कैसे पता चलता. फिर लैपटॉप का पासवर्ड... भास्कर के बाद शेखर को ही मालूम हो सकता था. क्योंकि अक्सर उसके सामने शेखर लैपटॉप खोलता रहता था. फिर लैपटॉप खोजने में ज़्यादा समय नहीं लगा. शेखर ने लैपटॉप क्रैश कर दिया. लेपटॉप के काम न करने के कारण ही तीसरी बार शेखर फ़ोटो नहीं सैंड कर सका. शेखर को वार्निंग के बाद छोड़ दिया गया. मानसी की गवाही के बिना कोई केस भी तो नहीं बनता था और मानसी की ऐसी स्थिति कहां थी.

मानसी ने एक गहरी सांस ली. क्या वह ये सारी बातें दीपेन को बताने का साहस कर पायेगी...?

एफ.टी.-२११, अरमापुर इस्टेट,
कानपुर-२०८ ००९
***मोबाइल:* ०९६५१६७०१०६**
Email: govindupadhyay78@gmail.com

पाठकों/ग्राहकों से निवेदन

कृपया 'कथाबिंब' की सदस्यता राशि मनी ऑर्डर से भेजते समय फ़ॉर्म पर अपना नाम, पता, पिन कोड सहित अंग्रेज़ी में साफ़-साफ़ लिखें. मनीऑर्डर भेजने के बाद पोस्टकार्ड पर पूरे पते सहित इसकी सूचना अवश्य दें. आपकी सदस्यता अगले अंक से लागू होगी. पते में परिवर्तन की सूचना भेजते समय कृपया नये पते के साथ पुराने पते का उल्लेख करना न भूलें.

- संपादक

जश्न

सहायक प्राध्यापक, रसायन विज्ञान
साक्षात्कार, दैनिक भास्कर, बीइंग माइंड फुल आदि पत्र-पत्रिकाओं में कहानी, कविता, गज़ल, निबंध, आलेख आदि रचनाएं प्रकाशित
: संप्रति :
भोपाल में एक निजी इंजीनियरिंग कॉलेज में अध्यापनरत
विगत दो वर्षों से मासिक पत्रिका 'बीइंग माइंड फुल' में निरंतर कॉलम लेखन.

प्रशांत पांडेय

इंटरनेट कैफों पर भीड़ उमड़ी पड़ी थी. विद्यार्थियों में हाहाकार मचा था. सबों का रिज़ल्ट आ गया था. कुछ फूलकर कुप्पा हो गये थे. कुछ मरा-सा मुंह लेकर कैफों से बाहर निकल रहे थे. कुछ डर के मारे अंदर जाने से कतरा रहे थे. आनंद ने डरते-डरते अपना रोल नंबर कैफेवाले को बताया. जैसे ही उसने नेट पर डाला. परिणाम काले नाग की तरह गले में आ लिपटा... पट्ठा तीन विषयों में अपनी लुटिया डुबाये बैठा था. आशंका सच साबित हुई. सिर झुकाये रोता हुआ क़ैफे से बाहर आ गया. घर को चला तो कलेजा मुंह को आ रहा था. पिताजी उठाकर ऐसा फेकेंगे जैसे वे मनों वजन के गेहूं के बोरे मंडियों में हवा में उछाल देते हैं. दोनों बड़े भाई तो जल्लाद हैं, ख़ूब पटक-पटककर दचकेंगे. फुदकी मज़ाक उड़ायेगी और जीभ निकालकर चिढ़ायेगी. उसके पेट में कोई बात तो पचती नहीं. पहली ही फ़ुर्सत में जाकर सारे मुहल्ले में ख़बर फैला आयेगी. मेरा भाई इस बार भी फेल हो गया. पिछले साल भी फेल हुआ था. इस बार भी मां के मुंह पर कालिख पोत आया. मैं तो हर साल फ़र्स्ट क्लास में पास होती हूं. सच में छोटी बहन न होती तो वो मार देता कि नानी याद दिला देता.

पैर घर की तरफ जाने से मना कर रहे थे. मस्तिष्क में शंका-कुशंकाएं सिर उठा रही थीं. पिछले वर्ष तो मां ने बचा लिया था. लेकिन इस बार वह ढाल न बनेगी. जब सिपाही ही नकारा साबित हुआ हो तो ढाल क्या कर लेगी?आनंद ने दिशा बदल ली. घर की ओर मुंह था, रेलवे स्टेशन की तरफ़ बढ़ चला. मैं फिर फेल हो गया. तो क्या हुआ? दूसरी बार ही तो फेल हुआ हूं. सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले सब फेल हो जाते हैं. कौन-सी नयी बात है. मेरे साथ के कितने फेल हो गये. बसंती भी तो फेल हो गयी. कितना रोती हुई घर जा रही थी. हम कोई प्राइवेट स्कूलों में पढ़ने वाले थोड़ी ही हैं जो हर साल पास हो जायें. सरकारी स्कूलों में तो समझ ही नहीं आता. शिक्षक कौन है? चपरासी कौन? साले महीने में चार बार तो पढ़ाने क्लास में आते हैं. ऊपर से उनके कत्था-चूना लगे मैले कुचैले दांत देखकर ही उल्टी करने का मन होता है. कुछ पूछने जाओ तो मारकर भगा देते हैं. हर आधा घंटे में पान की दुकान पर पहुंच जाते हैं. कितनी चाय पीते हैं. फिर घड़ी-घड़ी मूतने पहुंच जाते हैं. पढ़ाने में किसी का जी नहीं लगता. हर समय बस तनख़्वाह का रोना रोते रहेंगे. मुझे सबका पता है. घर में पत्नियों की

ठुकाई करते हैं. मोबाइल पर घंटों दूसरी औरतों से बात करते हैं. क्या बच्चे नहीं समझते कि क्लास के कोने में फुसफुसाकर मंद-मंद मुस्कुराते हुए कहां बातें हो रही हैं. मेरे फेल होने पर सब आसमान सिर पर उठा लेंगे. कोई यह नहीं कहता, जरा हमारे टीचरों की परीक्षा लेकर देखो. दसवीं पास किए हुए जमाने बीत गये. अभी परीक्षा लो तो साला एक भी पास न होगा. अभी परीक्षा लो तो कई महानुभावों को यह पता न होगा कि १५ अगस्त और २६ जनवरी क्यों मनाते हैं? साले मैडमों को घूर-घूरकर देखते रहेंगे. उनके कपड़ों पर चर्चा करेंगे और बेशर्मी से हंसेंगे. स्कूल में इतनी जगह गुटखा खाकर थूका है कि पौधे रोपे जाते तो अभी तक फल देने लगते. बेशर्म कहीं के. किसी को कुछ नहीं आता. मैं कैसे पढ़ता? मुझे किसी ने पढ़ाया ही नहीं. मैं तो घरवालों से साफ़ कह दूंगा मुझे प्राईवेट स्कूल में पढ़ाओ. तब पास होऊंगा. मेरी क्या ग़लती? जान बूझकर फेल होने में किसे मज़ा आता है.

रेलवे स्टेशन आ गया था. आनंद सोच-विचार में डूबा चला जा रहा था. स्टेशन में दाख़िल होकर एक पटरी के किनारे-किनारे चलने लगा. सबको फ़र्स्ट क्लास चाहिए. मैडमें भले ही सेकेंड़ डिविजन में पास हुई हों. किंतु हम से आशा करती हैं, फ़र्स्ट डिवीज़न में पास हों. अच्छी बात है, हमसे उम्मीद रखना चाहिये. लेकिन पहले पढ़ाओ तो सही. बस क्लास में रोज अपनी नयी साड़ी दिखाने आ जायेंगी. आता-जाता कुछ नहीं. मोबाइल पर न जाने किससे अपनी सास, पति और ननदों की बुराई करती रहेंगी. कभी दूध कहां रखा है, यह बतायेंगी. कभी कहेंगी तुम्हारे चड्डी-बनियान मैंने धो दिये थे. अपने पति के चड्डी-बनियान धो कर आयी हो. यह ऊंची आवाज़ में हमें सुनाने की ज़रूरत क्या है? पढ़ाते समय इतनी मरी आवाज में बोलेंगी जैसे प्राण छोड़ रही हों. मोबाइल पर सास की बुराई इतनी ऊंची आवाज में करेंगी. मानो युद्ध का शंखनाद कर रही हों. पागल कहीं की. पता नहीं कहां-कहां के स्कूलों से पढ़कर आ गयी हैं. हमारा बंटाधार किये दे रही हैं. बारिश में आती नहीं. ज़्यादा ठंड पड़े तो आती नहीं. तीज-त्यौहार पड़े तो एक दिन पहले ही मेंहदी लगाकर स्कूल आ जायेंगी. ताकि चाक न उठाना पड़े. सबकी सब भ्रष्ट हैं. विचार मग्न आनंद काफ़ी दूर निकल आया. जब नर्मदाजी का पुल दिखायी. दिया तो जैसे ध्यान भंग हुआ. जाकर रैलिंग के पास खड़ा हो गया और बहती धार देखने लगा. मन भारी था. विचार नीचे बहते जल के समान आ रहे थे और जा रहे थे. अचानक एक आवाज़ ने ध्यान भंग किया.

-' क्यों रे! पुल पर क्यों खड़ा है? मरेगा क्या? चल भाग यहां से. तेरे बाप को मैं अच्छे से जानता हूं.' एक मल्लाह ने डांट लगायी, जो नाव लेकर मछलियां पकड़ रहा था. आनंद वापस लौट पड़ा.

जैसे ही आनंद मोहल्ल्ले में दाख़िल हुआ, प्राण सूखने लगे. घर के ऊपर लगी टीवी की छतरी दिखने लगी. आज बचूंगा नहीं. काश बजरंगबली कुछ चमत्कार दिखा देते! सुना है, कलयुग में आजकल वही भक्तों की पुकार सुनते हैं. रोनी सूरत बनाकर जाऊं तो भी बचूंगा नहीं. पिछले साल की बात कुछ और थी, तब मां ने पहले से ही रोना-धोना मचा रखा था.

— 'जियो बेटा आनंद! भई बाप हो तो तुम्हारे जैसा. 'इमरत का लड़का नुक्कड़ की पान की दुकान पर खड़ा मिल गया. 'साला! तेरे फेल होने की ख़ुशी में पार्टी दे रहा है. 'इमरत का लफंटू गुटखा पिच्च करते हुए बोला. आनंद कुछ समझ पाता. इसके पहले ही फुदकी आकर गले में झूम गयी.

—'भइया! तेरे फेल होने की ख़ुशी में पापा ने पार्टी दी है.' आनंद विस्मय से भरा घर को दौड़ा. पहुंचा तो नज़ारा बदला हुआ था. एक कोने में डीजे लगा था. जिस पर मोहल्ले के आवारा थिरक रहे थे. शामियाने में कुछ कुर्सियां सजी थीं. फटकी के सामने चमचमाती एक्टिवा खड़ी थी. दरवाजे पर मां पूजा का थाल लिये खड़ी थी. पिता के हाथों में गेंदे की माला थी.

— 'कहां गया था रे तू! कितनी देर लगा दी. फेल हो गया तो मुंह छुपा रहा था.' पिता ने आनंद के गले में माला डालकर उसे बाहों में कस लिया. आनंद की रुलाई फूट पड़ी. अपने पिता से उसे इस व्यवहार की आशा न थी.

— 'देख! बड़ा भाई तेरे लिए अपने पैसों से एक्टिवा ख़रीद कर लाया है.' आनंद ग्लानि के सागर में डूबने उतराने लगा.

—'मझले भइया ने खाने-पीने का इंतजाम किया है. समोसे, केक, रसगुल्ले और भी न जाने क्या-क्या.' फुदकी एक सांस में बता गयी. आनंद की हिचकियां बढ़ चलीं. लगा जैसे एक हारे हुए सिपाही का सब यशोगान कर रहे

हों. दोनों भाई एक्टिवा के पास खड़े मुस्कुरा रहे थे. आनंद उनके पैरों में जाकर गिरा. आंसुओं से उनके जूते गीले हो उठे. मां उसे उठाने को दौड़ी किंतु बाप ने रोक दिया.

—'हमें तो कल ही पता चल गया था कि तू फेल है. सबने तय किया कि अपना आनंद तब भी जश्न मनायेगा. पास होने की तो सब ख़ुशी मनाते हैं. मज़ा तो तब है जब फेल होने पर भी प्रसन्न हुआ जाये. तूने कोई बुरा काम थोड़े ही किया है जो हम तुझ पर नाराज हों.' पिता के मुंह से उमड़ता वात्सल्य उसे हनुमान जी का आशीर्वाद लग रहा था. जाकर पिता के सीने से लग गया. बाप भी अपने बेटे को आत्मसमर्पण करते देख फूट पड़ा. पिछले साल बेचारे को नाहक ही पीटा. वह कौन–सा पढ़ा-लिखा है. खुद के लिए तो काला अक्षर भैंस बराबर है. कम से कम बेटा तो उससे दस जमात आगे है. मां पास आयी और पल्लू से आनंद के आंसू पोंछते हुए बोली — 'मत रो! चल अब गाड़ी की पूजा कर.'

— 'नहीं मां. मुझे इसका अधिकार नहीं. मैं तो फेल हो गया.' आनंद की रुलाई रुकती न थी. दोनों भाइयों की ओर देखता हुआ बोला — 'इसे चलाने का अधिकार तो उनको है जिन्होंने इसे अपने पसीने की कमाई से ख़रीदा है.' सुनकर फुदकी समेत सब रो दिये. आनंद दसवीं में ज़रूर फेल था, किंतु बड़प्पन की परीक्षा में छलांग मार गया था. दोनों भाइयों ने उसे सीने से लगाकर कंधों पर उठा लिया. आनंद को लगा जैसे वह एक ऐसे राज सिंहासन पर है. जिस पर बैठकर वह अपने कर्त्तव्य से मुंह नहीं मोड़ सकता. उसे एक राजा की भांति सब के आंसू पोंछने होंगे.

— 'अब मैं मन लगाकर पढूंगा मां. आगे से कभी फेल नहीं होऊंगा.' वाणी में दृढ़ संकल्प उभरने लगा था. फुदकी गाड़ी की चाबी अंगुली में घुमाकर संकेत दे रही थी. आओ गाड़ी रगे दें. पेट्रोल फुल है. मोहल्ले के लोग पार्टी में आने लगे थे. सबने एक हम्माल की इस पहल की मुक्तकंठ ठसे प्रसंशा की. आनंद का गाड़ी चलाने का विचार नहीं था. उसने फुदकी का हाथ पकड़ा और डीजे के पास पहुंच गया. वह नागिन डांस में माहिर था. फुदकी मुंह में रुमाल का एक छोर दबाकर बीन बजाने का स्वांग भर रही थी.

बी-४५ छत्रसाल नगर फेज़-१
इंद्रपुरी, भेल, १ नंबर गेट,
भोपाल (म. प्र.)
मो. ९९२६५०९१०८

लघुकथा

सामाजिक दायित्व

मार्टिन जॉन

अलसुबह गोपालदास जी चल बसे. जवान बेटी के हृदयविदारक चीत्कार और रूदन ने मोहल्ले में यह दुःसंवाद प्रचारित कर दिया. ... घर में फूटी कौड़ी भी नहीं थी. होती भी कैसे? रेलवे की अनाधिकृत छोटी सी ज़मीन पर गोपालदास जी अपनी बूढ़ी काया पेर-पेर कर कुछ सब्ज़ियां उगाते और उन्हें बेचकर अपने और जवान बेटी के पेट की आग किसी तरह बुझाते. पैसे रखने और बचाने का सवाल ही पैदा नहीं होता.

शाम उतरने के पहले ही मोहल्ले वालों ने एन-केन प्रकारेण गोपालदास जी की मृत देह को 'शॉर्टकट' में शास्त्रीय विधानों का पालन करते हुए अग्नि को समर्पित कर दिया. लेकिन उनकी आत्मा की शांति की चिंता उन्हें बुरी तरह सताने लगी.

फिक्रमंद लोगों ने पहल की और गोपालदास जी के श्राद्धकर्म के नाम पर चंदा उगाही शुरू कर दी. आत्मा को शांत करने जैसे पुण्य कार्य से किसी को भला क्या ऐतराज़! सो, तमाम लोगों ने जी खोलकर चंदा दिया. निश्चित समय पर श्राद्धकर्म संपन्न हुआ. पंडितों ने दान-दक्षिणा लेने में कोताही नहीं बरती. सौ-डेढ़ सौ लोगों ने श्राद्ध के नाम पर तीन-चार क़िस्म के पकवानों को उदरस्थ करने में किंचित भी संकोच नहीं किया.

सामाजिक दायित्व का पालन करके सभी चिंतामुक्त हो गये. लेकिन उनकी चिंता में गोपालदास जी की बेसहारा जवान बेटी कहीं नहीं थी.

अपर बेनियासोल, पो. आद्रा, जि. पुरुलिया (पश्चिम बंगाल)-७२३१२१. मो. : ९८००९४०४७७

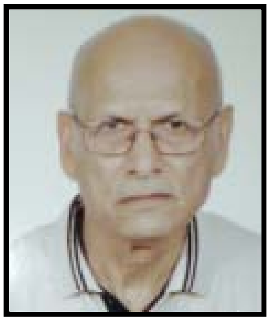

१६ जुलाई १९४९, इंजीनियरिंग, प्रबंधन एवं ऊर्जा-अंकेक्षक.
: प्रकाशन :
गीला धूप, बांध बध बर्ड हिट, सूरज में खरोंच, टॉवर ऑन द टेरस सुरंग में गुफाएं (उपन्यास); बिके हुए संदर्भ, झुठे आकाश, काला तोता, एक हांफती हुई शाम, अंधी रोशनी, हाथी दांत का चश्मा, द कांकीट बुद्धा, राजेश जैन की २१ कहानियां (कथासंग्रह); चिंदी मास्टर, चिमनी चोगा, वायरस, कोयला चला हंस की चाल, बिष वंश, धक्का पंप, गणित देवता, चप्पल कांड (नाटक); रोशनी के खेतों में, शब्द शिला, जिनांजलि (कविता संग्रह); यंत्र सप्तक, कथा ऊर्जा कॉम, वैशालिक की छाया में, कॉरपोरेट कथाएं (संपादन); एक पैसे की चिल्लर, नकली चांद, साजमहल, कथा वृक्ष, बड़े से बड़ा, जंगल में ई-मेल, रहस्यों का सौदागर, विस्फोट, रोबोकेट, इमारतों की चोरी, नैनो जादूगर, चूहा पकड़ा गया (बाल साहित्य).
: पुरस्कार / सम्मान :
हिंदी अकादमी दिल्ली, म. प्र. साहित्य अकादमी, बोपाल, ऊर्जा मंत्रालय भारत सरकार, चिल्ड्रेन बुक ट्रस्ट नयी दिल्ली, आर्य स्मृति सम्मान, किताब घर दिल्ली, अनुपम बाल साहित्य पुरस्कार, अजमेर
: विशेष :
रचनात्मक हिंदी साहित्य में प्रौद्योगिक साहित्यिकता, आध्यात्मिकता एवं शब्द ऊर्जा की अवधारणा के प्रति सक्रिय जागरूकता. एनटीपीसी से सेवा निवृत्त महाप्रबंधक.
: संप्रति :
निदेशक, कात्यानी इनर्जी.

‘उपचार’

राजेश जैन

यूं तो बंसल साहब काफ़ी सख़्त थे कि बिना पूछे कोई उनके केबिन में न आये. दफ़्तर में सभी जानते हैं यह बात, इसलिए ऊर्जा विशेषज्ञ ज़ी एम. बंसल के केबिन में घुसने से पहले पी. ए. से ज़रूर पूछ लेते हैं. प्रदेश की कई हज़ारों मेगावाट वाली विद्युत-ग्रिड के लोड डिस्पैच प्रभारी हैं वे. केबिन में सामने घड़ी की तरह कुल लोड और फ्रीक्वेंसी का स्मार्ट मीटर दमकता रहता है, जहां उनकी नज़र बराबर बनी रहती है. जरा भी उतार चढ़ाव दिखा तो तत्काल एलसीडी स्क्रीन पर फ़ीडर्स में विद्युत शक्ति के आंकड़ों का मूल्यांकन करके कंट्रोल रूम को फ़ोन करते वे और विद्युत ग्रहों से उत्पादन बढ़ाने को कहते. अगर फिर भी ग्रिड की सेहत नहीं सुधरी तो फ़ीडर कटवा देते. ज़रूरत पड़ने पर, कई शहरों की बिजली गुल करवा सकने का अधिकार रखते हैं वे. विभाग के लोग मज़ाक में कहते भी हैं, बंसल सर तो ऊर्जा के जादूगर हैं. उनके पास जादू की छड़ी है जिसके एक इशारे पर शहर के शहर जगमगा उठते हैं या अंधेरे में डूब जाते हैं.

लेकिन उनका स्मार्ट फ़ोन उनकी इस पाबंदी की परवाह नहीं करता और हरफन मौला की तरह जब–तब असमय अपनी रिंग से उनकी चेतना में घुसकर, उन्हें झकझोर देता — कभी बूंद भरी आवाज़ टन्न से टपककर मैसेज़ के आगमन की सूचना देती तो कभी लगातार थरथराती घंटी बात करने के लिए दस्तक देती हुई महसूस होती. केबिन में बैठना, कोई फ़्लाइट में बोर्ड करने जैसा तो है नहीं कि मोबाइल को ‘स्विच ऑफ़’ कर दिया या ‘फ़्लाइट मोड’ में डाल दिया — फिर कॉर्पोरेट ऑफ़िस से डायरेक्टर बॉस और कभी-कभी बिजली मंत्री महोदय का सीधा काल भी आ सकता है.

उन्हें, बॉस जितना ही खौफ़ बीबी सोनाली का भी है. फ़ोन बंद मिला नहीं कि घर पहुंचते ही दस सवाल. बेतुकी पूछताछ और ताने अलग. बाहर से ज़्यादा प्रदूषण घर के अंदरूनी दिमाग़ी वातावरण में फैल जाता.

अभी जो ‘टन’ वाला मैसेज़ आया वो बैंक से था. फ़ाइल से नज़र हटा कर उन्होंने मोबाइल पर सरसरी नज़र डाली. योर अकाउंट डेबिटेट

रुपीज़ ५०००. एकबारग़ी दिमाग़ में कौंधा — 'इसका मतलब, श्रीमती शॉपिंग पर हैं...क्या ख़रीदा होगा? जो भी हो, सोनाली से पूछना, मतलब उसकी आर्थिक स्वतंत्रता पर हस्तक्षेप करना. यानी फिर चिकचिक और उसके तीखे कटाक्ष सुनना. एडिशनल एटीएम कार्ड, उसी की ज़िद पर बना था, जब उसने एक बार चिल्लाकर कहा था — तुम पैसे कमाते हो, इसका मतलब यह तो नहीं कि लाटसाहब हो गये? अपनी हर छोटी-बड़ी ज़रूरत के लिए मैं तुम्हारे सामने हाथ फैलाती रहूं. मालूम है माह वाले पैसे कितने जल्दी खलास हो जाते हैं और मैं फिर तुम पर निर्भर भिखारिन की तरह मांगूं, हिसाब दूं. यही चाहते हो तुम तो मेरा भी हक़ है तुम्हारे पैसों पर. नौकरानी समझते हो मुझे? घर के कामों के लिए मुझे कौन-सी पे मिलती है?

लोड डिस्पैच केंद्र के प्रभारी, ऊर्जा विशेषज्ञ टेक्नोक्रेट बंसल, हज़ारों मेगावाट पॉवर वाली ग्रिड की देखभाल करते हैं, उसका तकनीकी और वित्तीय संतुलन बनाये रखने की उधेड़ बुन ही उनकी नौकरी है. हर पल यह आकलन कि ग्रिड में कितनी ऊर्जा ज़नरेट हो रही है और कितनी खपत हो रही है. दोनों में सामंजस्य आवश्यक है ताकि सिस्टम की फ्रीक्वेंसी बैलेंस पचास हट्ज़ के आसपास बनी रहे.

उन्हें लगता उनके घर में भी ऐसी ही मानसिक ग्रिड है जो अक्सर असंतुलित ही रहती है. सोनाली अपने जले कटे शब्दों से जो ऊर्जा घर की मानसिक ग्रिड में इंज़ेक्ट करती है, वे उसे पूरी तरह नहीं पचा पाते. वह नहीं चाहते कि उनका मन अशांत हो इसलिए वे डिस्टर्बेंस के समय अनसुना करके चुप रहते या मन मसोस कर बात टालने की कोशिश करते, पर सोनाली अपना आक्रामक तेवर तब तक बनाये रखती, जब तक उसकी भड़ास, पूरी तरह नहीं निकल जाती. ऐसी स्थिति में उनकी मानसिकता उसी उहापोह में उलझी रहती, जैसी कि प्रदेश की विद्युत ग्रिड में इमरजेंसी आने पर, तनावग्रस्त हो जाती है – बल्कि उससे कहीं अधिक दुरूह संकट से अपने को घिरा हुआ महसूस करते हैं वे — मन ही मन मनाते कि बस यह तूफ़ानी क्षण किसी तरह गुज़र जाये और सामान्य फ़िफ्टी साइकिल फ्रीक्वेंसी वाली स्थिरता पुन; बहाल हो जाये.

शाम को घर पहुंचे तो सोनाली यथावत ठंडी किंतु पैनी निग़ाहों से उन्हें रह रहकर देखती रही. जूते उतारते हुए उन्होंने ही सहजता के लिए पहल की — 'आज क्या शॉपिंग कर आयी हो?'

'तुम्हें कैसे पता चला?'

'एटीएम कार्ड से तुम जब भी मेरे बैंक अकॉउंट पर डाका डालती हो तो मेरा मोबाइल उसकी चुगली झट कर देता है. मैसेज़ जो आ जाता है. क्या ख़रीदा?'

'कुछ नहीं, मिसेज़ मलिक और मैंने प्राणिक हीलिंग का कोर्स ज़्वाइन कर लिया है. उसकी फ़ीस की पहली किश्त दी है. माना कि मैं आर्ट्स ग्रेज़ुएट हॉउस वाइफ़ हूं. वर्किंग नहीं हूं इसलिए आर्थिक तौर पर तुम पर निर्भर ज़रूर हूं, पर क्या मैं अपनी मर्ज़ी से इतना भी नहीं कर सकती?'— सोनाली के जवाब में कटाक्ष और आहत भरा अहंकार, दोनों ही समाये हुए थे.

'मैंने ऐसा तो नहीं कहा सिर्फ़ पूछा है. क्या होता है प्राणिक हीलिंग में?'

'बीमारियों का इलाज. अपना और दूसरों का भी.'

'कैसे?'

'ऊर्जा, यानी इनर्ज़ी से धनात्मक इनर्ज़ी यूनिवर्स, पानी, वनस्पतियों या वातावरण आदि से ली जाती है और उसकी दिशा साधकर रोगी के उस अंग में उड़ेल दी जाती है, जहां रोग है. रोग यानी नेगेटिव इनर्ज़ी या नो इनर्ज़ी' — सोनाली ने कहा.

'राइट, ब्रह्मांड में ऊर्जा तो अथाह अनंत है, विज्ञान का कहना भी है, ऊर्जा न तो नष्ट होती है, न उत्पन्न, वह बस अपना प्रारूप बदलती है. जैसे हमारी विद्युत ग्रिड में. लोग मुझे ऊर्जा का जादूगर कहते हैं. चुटकियों में विद्युत ऊर्जा इधर से उधर कर सकता हूं. उसी तरह क्या प्राणिक हीलिंग में भी ऊर्जा के बहाव को ट्रैफ़िक की भांति कंट्रोल किया जाता है?'

'कुछ कुछ ऐसा ही है. पर दिखाई कुछ भी नहीं देता.' — सोनाली ने कहा.

'और न ही मापने के लिए कोई मीटर्स होते हैं जो दर्शाएं कि ऊर्जा की कितनी मात्रा, किस दिशा में जा रही है?'

'पर क्या, जो दीखता या मापा नहीं जा सकता, वह होता ही नहीं है?' — सोनाली ने सवाल उठाया.

'इसे ही लोग अंधविश्वास कहते हैं और...' — बंसल अपनी बात पूरी न कर सके.

'और कुछ लोग आध्यात्मिकता... यही कहना चाहते

हो न?' — सोनाली बोली.

'करेक्ट... आध्यात्मिकता ज़्यादा संभ्रांत शब्द है. वर्ना इसी को जादू टोना... या टोटका, सिद्धि का नाम देकर लोग कुटिलता से अपना उल्लू सीधा करते हैं...'

'तुमने ही आइन्स्टीन का नाम लेकर बताया था कि हर पदार्थ में ऊर्जा होती है, क्योंकि सारे पदार्थ अणु–परमाणु जैसे ऊर्जा-कणों के संघ से बने हैं...' — सोनाली ने ज्ञान जताया.

'येस. सब रूपों का खेल है. ब्रह्मांड, ऊर्जा तरंगों की सघन ग्रिड है. जो हमेशा संतुलित रहती है. इसमें जो भी घटित हो रहा है, वह ऊर्जा के स्वरूप का परिवर्तन या परावर्तन ही है, जो अनादि काल से अविरल हो रहा है और अनंत काल तक चलेगा. शायद यही है तुम्हारा आध्यात्म और मेरा विज्ञान भी...' — बंसल ने सोनाली की हां में हां मिलायी.

'तभी कहते हैं, ब्रह्मांड, ऊर्जा द्रव का वह लचीला पात्र है, जो वैसा ही आकार ग्रहण कर लेता है जैसा कि उसमें समाये अधिकांश लोग सामूहिक तौर पर चाहते हैं. चाहना, सोचना या कर्म करना, ऊर्जा को दिशा देना मात्र है... ठीक कह रही हूं न ऊर्जा-पुरुष जी.'

'ऊर्जा–पुरुष...' — एकाएक चौंककर बंसल ने कहा — 'ऐसा ही नाम है उस अवार्ड का जो अगले माह हमारी इनर्ज़ी इंज़िनियर एसोसिएशन मुझे दे रही है. भोपाल में फ़क्शन है... चलोगी न?' — बंसल ने सोनाली को आमंत्रण दिया.

'अवार्ड तुम्हें मिल रहा है, मुझे क्या, मुझे ताली बजाने के लिए ले जाना चाहते हो – शादी के बाद यही करती आ रही हूं. तुम्हारी सुविधा के लिए किचन और बच्चे संभालती रही हूं... मुझे कौन-सी तनख़ा मिलती है, जरा बताना तो सही?' सोनाली की बात से बंसल का मन कड़वा हो गया. लेकिन घरेलू ग्रिड की स्थिरता को ध्यान में रखते हुए वे चुप ही रहे.

बंसल ने नोट किया कि सोनाली अपने नये फितूर यानी प्राणिक हीलिंग में जुट–सी गयी है. अपनी मेंटर मिसेज़ दासानी से मिली क़िताबों को ध्यान से पढ़ती रहती या गेस्ट रूम में बंद होकर वह ध्यान करती. सामने छोटे टब में पानी भरकर, बुदबुदाते हुए दोनों हथेलियों को इधर-उधर हिलाती. अगर कोई नया व्यक्ति, उसे वैसा करते हुए पहली बार देखे तो यही समझेगा कि मानो जादू–टोना किया जा रहा है. वक़्त होता तो वे भी ड्राइंग रूम में इधर–उधर पड़ी उसकी क़िताबों पर नज़र डाल लेते और विषय को समझने की कोशिश भी करते.

लंबे वैवाहिक जीवन के गत अनुभवों से उन्हें मालूम है कि अपने खालीपन को भरने के लिए सोनाली कुछ न कुछ नया करती रहती है — कभी स्वीमिंग सीखने की धुन सवार हुई थी तो अच्छी-ख़ासी फ़ीस देकर, क्लब ज्वाइन कर लिया. अपने आप और इतनी उम्र में जोख़िम के बावजूद स्वयं स्कूटर चलाकर अकेले रोज़ नियत समय पर पूल जाती रही. घर में उनसे, तैरने के लाभ और वाटर-थैरेपी के अपने ज्ञान एवं प्रयोगात्मक अनुभवों के बारे में बातें करती रहती... महीनों यह दौर चला. आशंकाओं के बावजूद बंसल ने अपना मौन समर्थन बनाये रखा कि चलो इस बहाने ही सही, सोनाली का खाली मन, गतिविधियों में व्यस्त तो रहता है.

ऐसे ही एक बार उसे प्रवचनों में दिलचस्पी हो गयी थी. जहां–तहां से, पैसे ख़र्च करके, धार्मिक क़िताबें मंगायी जाने लगीं. घर की आलमारियों में क़िताबों का ढेर लग गया. समय असमय वह क़िताबों में डूबी रहती और नियमित मंदिर जाकर घंटों स्वाध्याय करती. जरा भी मौक़ा मिला नहीं

ग़ज़ल

✍ राजेंद्र निशेश

हवा के रूख़ को पहचानता कोई कैसे,
दबी हुई है आग मानता कोई कैसे!
लबों पे सब के लगे हुए जब ताले थे,
बिगड़े हालात को तब टालता कोई कैसे!
सपनीली दुनिया के लेते रहे वे ख़्वाब,
लुट चुका है कारवां जानता कोई कैसे!
ज़ख़्मी परिंदे-सा लाचार था पड़ा हुआ,
वक़्त के परों को फिर जांचता कोई कैसे!
तूफ़ान की मार थी और छत भी ग़ायब थी,
बेरहम मौसम से जूझता कोई कैसे!
गूंगे बहरे थे सभी हुक़्मरान बस्ती के,
उनके दुखों को फिर बांटता कोई कैसे!

२६१८, सैक्टर : ४०-सी,
चंडीगढ़-१६००३६.

कि दूसरों के सामने अपनी पढ़ी हुई बातों का बख़ान करने लग जाती.

दुनियादारी के अपने तजुर्बों के कारण, बंसल को पत्नी का जटिल मनोविज्ञान समझने में देर न लगी कि अपनी रिक्तता को भरने और अनजाने हीनतावश, यह सब, वह अपनी ओर दूसरों का अटेंशन पाने के लिए करती है, ताकि अपना महत्व न केवल महसूस कर सके, वरन उसका प्रदर्शन भी हो जाये.

इधर प्राणिक हीलिंग का उसका अभ्यास चलता रहता – यहां तक कि वह घर का काम करने वाली बाई की बीमारियों का भी इलाज करने से नहीं चूकती. उसे सामने स्टूल पर बिठा कर ध्यान में आंखें बंद कर हथेलियां हिलाती हुई, ऊर्जा को रोगी के उस अंग की ओर भेजती, जहां उसे पीड़ा है. वह चाहती थी कि और लोग भी उसके इस हुनर को जानें और उसके पास इलाज के लिए आयें. बंसल से उसने कहा भी था — 'कहो तो तुम्हारी शुगर की बीमारी, ठीक करने की कोशिश करूं, पर तुम्हें पूरा विश्वास होना चाहिए, जैसा कहूं करना होगा? अपना बेटा पुलकित अमेरिका में है पर मेरी बात को मानता है. मैं ध्यान करके उसे भी इनर्ज़ी भेजती हूं, जब भी बहू या पोते की तबियत ख़राब होती है, मैं उनके नाम पर ही, ऊर्जा भेज देती हूं. अगर रोगी दूर है तो उसका नाम भर मालूम होने से भी, काम चल जायेगा.'

'अच्छा इतनी एक्सपर्ट हो गयी हो. ऊर्जा का पोस्ट ऑफ़िस हो तुम तो? तुम्हारी गुरू दासानी को मानना पड़ेगा और भी ज़्यादा एक्सपर्ट होंगी वे? क्यों न मैं अपना इलाज सीधे उनसे ही करा लूं?'

'उन्होंने इलाज बंद कर दिया है. बस हम जैसों को सिखाने का काम ही करती हैं. बहुत हुआ तो वे प्राणिक हीलिंग से मृत्यु शैया पर पड़े वृद्धों को जीवन से मुक्ति दिलाने में ही मदद करती हैं.' — सोनाली का जवाब था.

'ओह, मृत्यु दाता हैं वे...?'

'कुछ लोग उन्हें इस कारण जल्लाद भी कहते हैं...'

'आशा करता हूं, तुम ऐसे किसी भी आक्षेप से बची रहोगी?'

'अपना अपना सोच है...'

'सो तो है, पर समाज में दूसरे, तब तक ही सदभाव बनाये रखते हैं जब तक उन्हें लाभ मिलता रहे, अन्यथा आरोप लगाने और उग्र होने में उन्हें देर नहीं लगती.' — बंसल ने कहा, पर आगे जो मन में था, वह नहीं कहा कि जादू-टोना या झाड़-फूंक करने वालों को प्राय: शंका और हेय दृष्टि से ही देखा जाता है. यद्यपि उसमें भी तनिक धुंधला और अनिश्चित विज्ञान है जिसका ज्ञान सबको नहीं होता. नीम हकीम ख़तरे जान, की संभावना के बावजूद, अधिकांश को ज़्यादा और सीधा मतलब सिर्फ़ तुरंत मिलने वाले लाभ से है.

इधर बंसल मन ही मन कुछ ज़्यादा ही आशंकित हो गये जब उन्होंने पाया कि काम वाली के संदर्भ से और भी, उस जैसे लोग घर में उपचार के लिए जब-तब आने लगे हैं. सोशल वर्क और मानवीय सेवा के नाम पर सोनाली उन लोगों की प्राणिक हीलिंग में जुट जाती. उन्हें संदेह था कि सेवा तो बहाना है, असली मकसद हीन भावना वश, अटेंशन और महत्व पाकर अपने अहम की पुष्टि करना है. सीधे–सीधे अगर अपना संदेह जताकर रोकते तो सोनाली बिफर जाती और फलस्वरूप घरेलू ग्रिड का संतुलन ख़तरे में पड़ सकता था.

तब वे भोपाल से लौट रहे थे. रात के दस बजने वाले थे, पर एसी टू टायर के उनके कोच में लोग सेटल नहीं हो पाये थे. उनकी तरह, प्राय: सभी ने बेडिंग फैला दी थी – कुछ लेट भी गये थे. उनसे सटे केबिन में जो परिवार था, उनका गोदी वाला शिशु लगातार रोये जा रहा था. मां के साथ-साथ अन्य सदस्य भी उसे चुप कराने में जुटे थे, पर सफलता नहीं मिल रही थी.

बंसल दंपत्ति के पास बगल में दोनों बर्थ नीचे की थीं. बच्चे के लगातार रोने से औरों की तरह वे भी कठिनाई महसूस कर रहे थे. सोनाली ने बंसल से कहा — 'लगता है बच्चा बहुत तकलीफ़ में है. बीमार है, उसे सांस लेने में तकलीफ़ हो रही है.'

'ठीक कह रही हो...'

'दूध भी नहीं पी रहा, बस रोये जा रहा है. बच्चे का मामला है, पेरेंट्स को कुछ कहा भी नहीं जा सकता. कहकर होगा भी क्या...वे ख़ुद कितना परेशान हैं.'

'मैं उसका इलाज कर सकती हूं...'

'प्राणिक हीलिंग से...' — एकाएक बंसल ने चौंककर कहा — 'ख़बरदार, जो इस तरह की पब्लिक प्लेस पर तुमने वैसा कुछ करने की कोशिश की, पता नहीं लोग हमारे

बारे में, न जाने क्या सोचने लगें?'

बंसल का कड़ा रुख देखकर सोनाली निराश-सी हो गयी — 'कोशिश करने में क्या हर्ज है? काश, बच्चे का नाम ही पता चल जाये. तब मैं उसके नाम से चुपचाप उसे ऊर्जा भेजकर उसका इलाज करने की शुरुआत करूं.'

'रहने दो, मैं तो कहूंगा — पता नहीं तुम्हें यह क्या सूझती रहती है. अपना घर या कोई परिचित हो तो बात अलग है, पर इस तरह ट्रेन में. न बाबा न..' — बंसल अपनी बात पर अटल थे. वे करवट बदल कर लेट गये.

बच्चे का रोना ज़ारी था. लोग भी परेशान थे. सो नहीं पा रहे थे. थोड़ी देर बाद जब बंसल ने करवट बदली तो पाया कि सोनाली अपनी जगह पर नहीं थी. कुछ समझ पाते या सोचते, तभी बगल के केबिन से उसे बच्चे के रोने की आवाज़ के साथ-साथ सोनाली का स्वर भी सुनाई दिया — 'बहुत रो रहा है न...क्या हुआ है इसे?'

बच्चे की मां का जवाब बंसल को सुनाई नहीं दिया, पर वे सोनाली का अगला प्रश्न सुन सके.

'क्या नाम है इसका?' — सोनाली पूछ रही थी.

उधर से 'बंटी' जैसा कुछ सुनाई पड़ा. सोनाली अपनी बर्थ पर वापस आ गयी. उनींदे पड़े बंसल ने देखा, अपनी बर्थ पर आकर, सोनाली ने चुपचाप ध्यान मुद्रा अपना ली और बुदबुदाते हुए, बीच-बीच में हाथों को ऐसे हिलाने लगी, मानो किसी आर्केस्ट्रा ग्रुप को लीड कर रही हो. वे समझ गये कि गुपचुप, सोनाली ने बच्चे का उपचार शुरू कर दिया है और उसे ऊर्जा भेज रही है.

बंसल चकित रह गये, जब पंद्रह बीस मिनट बाद उन्होंने पाया कि बच्चा सचमुच चुप हो गया था. सोनाली के चेहरे पर विजयोल्लास की चमक, नीम अंधेरे में भी साफ़ नज़र आ रही थी. नज़र मिलते ही, उन्होंने भी जैसे सोनाली को प्रशंसात्मक बधाई दी. बच्चे के चुप होते ही, वातावरण हल्का हो गया. सबने राहत की सांस ली और चैन से सोने की तैयारी करने लगे.

जब बंसल और सोनाली की नींद टूटी तो पाया बाहर सुबह का उजाला छाने लगा था — शायद मथुरा निकल गया, वे सोचने लगे. तभी बगल के केबिन से उन्हें सिसकने और कुछ दबी-दबी सी रोने की आवाज़ सुनाई दी. वे चौंक गये. उठकर पता किया तो मालूम पड़ा कि बगल वाला बच्चा रात में चुप होने के बाद जो सोया तो फिर उठा ही नहीं.

बंसल और सोनाली भौंचक्के हो एक दूसरे को ताक रहे थे. बंसल को लगा मानो उनके नियंत्रण वाली प्रादेशिक ग्रिड अचानक ठप्प होकर अंधेरे में डूब गयी है और वे असहाय से, कंट्रोल रूम में पैनल्स के सामने खड़े हैं.

४० करिश्मा अपार्टमेंट्स्
२७, इन्द्रप्रस्थ एक्सटेंसन,
दिल्ली ११००९२
मो. ९७१७७७२०६८
rajesh492003@gmail.com

लघुकथा

मज़हब

पारस कुंज

हर ओर सांप्रदायिक तनाव था. लूट-पाट, मार-काट मची थी. कई दिनों तक शहर में कर्फ़्यू भी लगा रहा, सेना को फ़्लैग-मार्च करना पड़ा.

समय गुज़रा. स्थिति नियंत्रित हुई, पर सामान्य नहीं. लोग हिंदू और मुसलमान दिखने लगे थे.

इसी बीच रामनवमी का त्यौहार आया. तभी अचानक एक दिन बाज़ार में, रमजानी को लाल-ध्वजा बेचता देख मैं चकराया.

मैंने उसे टोका, ''अरे, रमजानी! भला यह क्या? अभी के इस नाजुक हालात में तुन्हें बस यही सूझी?... तुम हनुमान जी की ध्वजा बेच रहे हो?... लोग क्या कहेंगे?... तुम मुसलमान हो, और फिर तुम्हारा मज़हब?...''

''का भायजान! आप भी कौन धरम और मज़हब की बात कर रहे हैं?... उसका जो आज हमारे नेताओं के यहां क़ैद है?...

फिर थोड़ा गंभीर होकर बोला, ''भायजान! हमारा तो मज़हब है, मेहनत-मशक्कत की दो रोटी! जो मेरा भी पेट भरे है और मेरे बीबी बच्चों का भी...

संपादक : शब्दयात्रा, सीता निकेत,
जयप्रभा पथ, भागलपुर-८१२००१.
मो. : ९५७२९६३९३०
ईमेल : paraskunjbgp@gmail.com

आमने-सामने

'पद्मभूषण नीरज के कर-कमलों द्वारा प्रदत्त अलंकरण से बढ़कर कोई भी सम्मान नहीं है

✍ अजीत श्रीवास्तव (उर्फ़ चपाचप बनारसी)

बहुत बार होता है कि पाठकों से लेखक केवल अपनी रचनाओं के माध्यम से ही बात नहीं करना चाहता बल्कि सीधे पाठक के सामने अपने मन की गांठ खोलना चाहता है, लेखक और पाठक के बीच की दीवार ख़त्म करने का प्रयास है यह स्तंभ, 'आमने-सामने'. अब तक मिथिलेश्वर, बलराम, (स्व.) प्रो. कृष्ण कमलेश, कृष्ण कुमार चंचल, संजीव, (स्व.) सुनील कौशिश, डॉ. बटरोही, राजेश जैन, डॉ. अब्दुल बिस्मिल्लाह, कुंदन सिंह परिहार, अवधेश श्रीवास्तव, श्रीनाथ, राम सुरेश, विजय, विकेश निझावन, नरेंद्र निर्मोही, पुन्नी सिंह, श्याम गोविंद, प्रबोध कुमार गोविल, स्वयं प्रकाश, मणिका मोहिनी, राजकुमार गौतम, डॉ. रमेश उपाध्याय, सिद्धेश, डॉ. हरिमोहन, डॉ. दामोदर खड़से, रमेश नीलकमल, चंद्रमोहन प्रधान, डॉ. अरविंद, (स्व.) सुमन सरीन, डॉ. फूलचंद मानव, मैत्रेयी पुष्पा, तेजेंद्र शर्मा, हरीश पाठक, जितेन ठाकुर, अशोक 'अंजुम', राजेंद्र आहुति, आलोक भट्टाचार्य, डॉ. रूपसिंह चंदेल, दिनेश चंद्र दुबे, डॉ. कृष्णा अग्निहोत्री, जयनंदन, सत्यप्रकाश, संतोष श्रीवास्तव, उषा भटनागर, प्रमिला वर्मा, डॉ. गिरीश चंद्र श्रीवास्तव, प्रो. मृत्युंजय उपाध्याय, सुधा अरोड़ा, पं. किरण मिश्र, डॉ. तेज सिंह, डॉ. देवेंद्र सिंह, राकेश कुमार सिंह, रमेश कपूर, डॉ. उर्मिला शिरीष, रामनाथ शिवेंद्र, अलका अग्रवाल सिगतिया, संजीव निगम, सूरज प्रकाश, रामदेव सिंह, मंगला रामचंद्रन, प्रकाश श्रीवास्तव, सलाम बिन रजाक, मदन मोहन 'उपेंद्र', भोला पंडित 'प्रणयी', महावीर रवांल्टा, गोवर्धन यादव, डॉ. विद्याभूषण, नूर मुहम्मद 'नूर', डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम', सुरेंद्र रघुवंशी, राजेंद्र वर्मा, डॉ. सेराज खान 'बातिश', डॉ. शिव ओम 'अंबर', कृष्ण सुकुमार, सुभाष नीरव, हस्तीमल 'हस्ती', कपिल कुमार, नरेंद्र कौर छाबड़ा, आचार्य ओम प्रकाश मिश्र 'कंचन', कुंवर प्रेमिल, डॉ. दिनेश पाठक 'शशि', डॉ. स्वाति तिवारी, डॉ. किशोर काबरा, मुकेश शर्मा, डॉ. निरुपमा राय, सैली बलजीत, पलाश विश्वास, डॉ. रमाकांत शर्मा, हितेश व्यास, डॉ. वासुदेव, दिलीप भाटिया, माला वर्मा, डॉ. सुरेंद्र गुप्त, सविता बजाज, डॉ. विवेक द्विवेदी, सुरभि बेहेरा, जयप्रकाश त्रिपाठी, डॉ. अशोक गुजराती, नीतू सुदीप्ति 'नित्या', राजम पिल्लै, सुषमा मुनींद्र, अशोक वशिष्ठ, जयराम सिंह गौर, माधव नागदा, वंदना शुक्ला, गिरीश पंकज, डॉ. हंसा दीप और कमलेश भारतीय से आपका आमना-सामना हो चुका है. इस अंक में प्रस्तुत है अजीत श्रीवास्तव की आत्मरचना.

८ जनवरी सन १९५५ को इलाहाबाद में जन्मा. मेरी मातृभूमि ग्राम व पोस्ट, रामापुर (ज्ञानपुर) भदोही है. पैदाइश के बाद चार वर्ष तक इलाहाबाद में रहा. सामान्य ग्रामीण कृषक परिवार का होने के कारण मेरी प्रारंभिक शिक्षा गांव में ही हुई. परिवार का मुख्य आधार अधिया पर कृषि और पिता जी की नौकरी रही. दादा की मृत्यु के बाद गांव पर खेती कराने और पारिवारिक भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी दादी ने निभायी. पिताजी की पढ़ाई भी गांव पर हाईस्कूल तक हुई. उन्होंने हाईस्कूल फ़र्स्ट डिवीज़न में पास किया. नौकरी में आ जाने के बाद उनकी शादी हुई. मां और मेरे अन्य भाइयों बहनों के साथ लगभग १२ वर्षों तक इलाहाबाद में ही रहे.

सबसे बड़ा पुत्र होने के नाते मुझे मेरी पैदाइश के पांच वर्ष बाद प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने, दादी को सहयोग प्रदान करने और जीवन के प्रारंभिक अनुभव प्राप्त करने के लिए पिताजी ने मुझे गांव (रामापुर) भेज दिया. संघर्षशील और धैर्यवान पिता के गुण से लैस मैंने प्रारंभिक शिक्षा गांव में ही ग्रहण की. मैं अपनी कक्षाओं का मॉनीटर होता रहा. छुट्टी के दिनों में रेहन पर रखी हुई खेती से बची शेष ज़मीनों पर खेती कराने दादी के साथ मैं भी जाता रहा. नौकरी में आने से पूर्व पिताजी भी दादा के साथ यही करते रहे. नौकरी में छुट्टी के दिनों में पिताजी जब गांव आते दादा उन्हें भी अपने साथ खेतों पर ले जाते रहे. दादा ने जीवनपर्यंत संघर्ष पूर्ण जीवन जिया. पारिवारिक भरण-पोषण, शिक्षा, दवा, रहन-सहन शादी-ब्याह की ज़िम्मेदारियों के चलते पूरी तरह सामान्य किसानी पर आधारित परिवार का मुखिया होने के कारण विवशतावश उन्हें अधिकांश खेती रेहन पर रखनी पड़ी. इसी घोर चिंता और बीमारी के चलते दादा की मृत्यु

हो गयी. यह अच्छा रहा कि उस समय पिताजी ने हाईस्कूल प्रथम श्रेणी में पास कर लिया था.

पिताजी के मामा भी इलाहाबाद के प्रतिष्ठित साहित्यकारों-समाजसेवियों में गिने जाते रहे. उनके आशीर्वाद और सहयोग से पिता जी को सरकारी नौकरी मिली. पिताजी के मामाजी का नाम व्यथित 'हृदय' था. उनकी दर्ज़नों पुस्तकें आज भी जानी पहचानी जाती हैं. पिताजी को नौकरी मिल जाने से परिवार को जीने का विशेष आधार मिल गया. उनके समक्ष अब यह ज़िम्मेदारी आयी कि पारिवारिक भरण-पोषण, शिक्षा और ज़िम्मेदारियों का कुशल निर्वाह करते हुए रेहन पर रखी हुई ज़मीनें कैसे छुड़ाएं? साथ ही गांव के मड़ई सरीखे टूटे-फूटे मकान का निर्माण कैसे कराएं?

समय का पहिया अपनी गति से चलता रहा. गांव पर सरकारी/अर्धसरकारी स्कूल की स्थिति यह रही, और है कि लगभग सात-आठ कि. मी. पर हम रहे. वही स्थिति कमोबेश भी है. अस्पताल की स्थिति तो और भी बदतर है. एकाध जो हैं भी वे निजी हैं उनमें पूरी तरह व्यावसायिक और बनियापन हावी है. सामान्य परिवार की पकड़ के पूरी तरह बाहर हैं. लोग अपनी परिस्थिति अनुसार आस-पास के शहरों में किराये-भाड़े पर रहकर बच्चों का भरण-पोषण करने और शिक्षित करने को बाध्य हैं. दो-चार सुविधा संपन्न परिवारों के बच्चों ने गांव के बाहर निजी व्यावसायिक स्कूलों में शिक्षा प्राप्त की है. अब भी कर रहे हैं. गांवों में जो प्रेमभाव और संस्कार रहा है, राजनैतिक दलों की गिरावट के चलते ध्वस्त हो चुका होता जा रहा है. विकास के नाम पर गांवों में कृषि योग्य ज़मीनों पर अधिकांश कंकड़ और कोलतार की सड़कें भी बनायी गयीं. सिंचाई की व्यवस्था रामभरोसे है. कुछ सुविधा संपन्न लोगों ने पंपों की व्यवस्था कर ली है. सामान्य लोगों के लिए सिंचाई हेतु अपने द्वारा निर्धारित मूल्य पर पानी प्रदान करते हैं, जोतने के लिए ट्रैक्टर भी.

दादी और मुझे छोड़ परिवार सहित पिताजी इलाहाबाद में रहे. लगभग बारह वर्षों बाद उनका स्थानांतरण वाराणसी के लिए हो गया. उस समय मेरी उम्र लगभग ११ वर्ष की थी. मैं गांव पर मिडिल स्कूल से कक्षा ५ पास कर चुका था. अपनी कक्षाओं का मैं मॉनीटर हुआ कता था. वाराणसी आकर पिताजी ने अपने मित्र कुंवर बहादुर श्रीवास्तव के सहयोग से पितरकुंडा मोहल्ले में किराये पर तीन कमरे का मकान लिया. मेरे अन्य भाइयों, बहनों समेत माता जी को भी दादी के कहने पर वाराणसी लाये. गांव पर दादी जी अकेली रह गयीं. खेती बारी की देखभाल दादी ही करती रहीं. समय का पहिया चलता रहा.

दादी ने मेहनत कर गांव पर रेहन रखी गयी ज़मीनें छुड़ायीं. इस तरह एक प्रकार से उन्होंने दादा की आत्मा को शांति प्रदान की. कुछ दिनों बाद दादी की भी मृत्यु हो गयी. अब समस्या यह पैदा हो गयी कि गांव में देखभाल के लिए कोई जानकार सदस्य गांव पर रहने के लिए नहीं बचा. पिताजी, माताजी हम भाइयों-बहनों में तालमेल कर गांव और शहर दोनों की देखरेख करते रहे. गांव का टूटा-फूटा मकान ठीक हुआ. बचपन से ही मुझमें, क्रांतिदर्शिता, जिज्ञासा परकता और असहायों-दीन-दुखियों की मदद करने का भाव शुरू से रहा है. ७ अप्रैल सन ७७ को वाराणसी में मुझे नौकरी मिल गयी और ७ जुलाई सन ७९ को शादी हुई. हालांकि शादी के पक्ष में मैं नहीं रहा. मैं आगे शिक्षा जारी रखना चाहता था. गांव और शहर दोनों जगह उचित देखभाल न हो पाने के कारण पिता और माता जी के दबाव के कारण ब्याह करना मेरी विवशता हो गयी. एक कारण और भी रहा कि कायस्थ परिवार के बड़े बुज़ुर्ग भरसक किसी नौकरीशुदा कुंवारे को अविवाहित रहने नहीं देते. उन्हें भय रहता है कि कहीं उनका बेटा बुरी संगत में न पड़ जाये. मां और गुरू की महती कृपा कहिए कि पत्नी सुशील, धार्मिक, गृहस्थी सम्हाल लेने में पूर्णतया सक्षम मिली जिसके कारण प्रतिकूल स्थितियों में भी बराबर सम्हलते रहने का स्वस्थ आधार प्राप्त होता गया. मेरे मज़बूत लेखन और साहित्य के प्रति पूर्णतया समर्पण का यह ठोस आधार रहा है. नौकरी की और पारिवारिक ज़िम्मेदारियां कुशलतापूर्वक निभाते हुए कारमाइकेल लायब्रेरी में लगभग दो-तीन घंटे नियमित क़िताबें पढ़ना मेरी हॉवी रही. जिसे आज मैं अपने घर पर छोटी-सी दुनियां में पूरी करता हूं. सन ७५ से ८३ तक की अवधि ने मेरे साहित्यिक लेखन को काफ़ी प्रभावित किया. यह अवधि आपातकाल की भी रही. मेरी शादी भी इसी अवधि में हुई. एक पुत्र भी मुझे इसी अवधि में हुआ. एक और भी बड़ी बात हुई कि कवि मित्र प्रकाश श्रीवास्तव ने मुझे यह सलाह दी कि अपनी कविता 'सर्कस का सातवां बौना' मैं धर्मयुग में प्रकाशन के लिए भेज दूं. पोस्टकार्ड पर ही लिखकर मैंने यह कविता प्रकाशन हेतु भेजी और धर्मयुग जैसी प्रतिष्ठित लोकप्रिय पत्रिका में प्रकाशित भी हो गयी साथ ही पुरस्कृत भी हुई :-

'सर्कस का सातवां बौना'
जिज्ञासा हुई कि सर्कस देखूं/देखा,
सर्कस के सात बौनों को
एक ने दूसरे के/दूसरे ने तीसरे के/तीसरे ने चौथे के
चौथे ने पांचवे के/पांचवें ने छठे के/ और छठे ने
सातवें के गाल पर तेज़ तमाचा मारा/बेचारा
सातवां बौना
बस गाल सहलाता रह गया
मंत्री से विधायक तक/विधायक से अधिकारी तक
अधिकारी से भारत के आम नागरिक तक की
स्थिति पर है यही रोना,
भारत का आम भारतीय नागरिक
यानी सर्कस का सातवां बौना.

देश के कोने-कोने से इस कविता पर ढेर सारी प्रतिक्रियाएं मिलीं. राष्ट्रीय ख्याति के श्रेष्ठ गीतकार श्री भारत भूषण ने तो यहां तक लिखा कि 'सर्कस का सातवां बौना' सर्वश्रेष्ठ व्यंग्य कविता है. इसी अवधि में मेरी हिंदी के कालजयी कवि डॉ. हरिवंश राय 'बच्चन' से वार्ता हुई. यह वार्ता मैंने 'नया सप्तक' में भूमिका के तौर पर उपयोग की.

'नया सप्तक' के प्रकाशन का मूल उद्देश्य समकालीन सात कवियों को राष्ट्रीय फलक पर स्थापित करना रहा. 'नया सप्तक' के लिए चयनित कवि रहे — सर्वश्री ब्रह्माशंकर पांडेय, अजीत श्रीवास्तव (चपाचप बनारसी), प्रकाश श्रीवास्तव, गणेश प्रसाद गंभीर, दानिश, सुरेंद्र वाजपेयी, शिवकुमार 'पराग'.

इसी अवधि में किराये का मकान छोड़कर पास के मोहल्ले काली महल में एक छोटा पुराना मकान लिया. सन २००० तक की अवधि मेरे लिए पारिवारिक, साहित्यिक और सरकारी सेवा की दृष्टि से अत्यधिक संघर्ष की रही. बावजूद इसके इस अवधि तक साहित्यिक पत्रिका 'परिक्षेत्र' का प्रकाशन नये रचनाकारों के प्रतिष्ठापन की दृष्टि से अपने ख़र्च पर करता रहा. इसी अवधि में मुरादाबाद में सेवारत पिताजी की मृत्यु हो गयी. इसी अवधि में एक बड़ा कवि सम्मेलन अपने संयोजन और संचालन में 'नीरज काव्य निशा' किया. 'लो उगा सूरज' काव्यकृति के प्रकाशन सहायतार्थ यह बड़ा काव्य समारोह मैंने अपने ख़र्च पर ही किया. वादी-प्रतिवादी छिछोर किस्म की कविताओं-कवियों का, पत्रिकाओं का पक्षधर मैं कदापि नहीं रहा. मैं बलपूर्वक यह भी कहना चाहता हूं कि सरकारी पुरस्कार पा लेने के लिए जो लपर-चपर किया जाता है न मैंने किया न आगे कर सकता हूं. विश्व स्तर पर नीरज सरीखे मान्य साहित्यकार के हाथों प्राप्त पुरस्कार अलंकरण किसी भी पुरस्कार-अलंकरण से किन्हीं अर्थों में मेरे लिए कम नहीं है.

'लो उगा सूरज' काव्यकृति मैं सन ८३ में ही प्रकाशित करना चाहता था. 'लो उगा सूरज' की पांडुलिपि को नीरज काव्यनिशा में आये पद्मभूषण गोपालदास 'नीरज' जी ने पूरी तरह से देखा और गंभीरता से उसे पढ़ा. नीरज दादा ने 'नीरज निशा' में दो बार में लगभग ७ घंटे काव्यपाठ कर पूरे खचाखच भरे हाल को जैसे मोहपाश में बांध लिया. हाल के बाहर रिमझिम बरसात का मौसम और भीतर नीरज के काव्यपाठ की बारिश १० बजे रात्रि से ५ बजे भोर तक. श्रोताओं को लगा ही नहीं कि समय कब व्यतीत हुआ? नागरी नाटक मंडली हाल से नीरज दादा होटल रामाडा गये. वहां से फ्रेश होने के बाद अपनी इच्छा से ही पुनः हाल में आये. संचालन के दौरान मैंने घोषणा की भी नीरज दादा अभी पुनः आयेंगे. नीरज दादा वचन के पूरे पक्के रहे हैं.

ऐसा वातावरण रहा कि नीरज दादा न श्रोताओं को छोड़ना चाह रहे हैं न श्रोता नीरज दादा को. अब तक क़रीब सुबह के साढ़े सात बज चुके थे. माह सावन का रहा. बादल घिरे थे. झिमिर–झिमिर पानी की फुहार! नीरज दादा ने माइक अपने हाथ में लिया. श्रोता भी पूरी मौज में रहे और नीरज दादा का कहना ही क्या? उन्होंने कहा — बनारस को मैं अपना घर समझता हूं. यहां से, मेरा ख़ासकर अजीत से, मेरा कोई व्यावसायिक लगाव नहीं है. अजीत को मैं अपना आत्मीय शिष्य मानता हूं. फिर शीघ्र आऊंगा. श्रोताओं ने तालियों की गड़गड़ाहट के साथ कारवां गुज़र गया की पुरजोर मांग की. नीरज दादा ने कहा कि एक शर्त आप मेरी पूरी करें. इस ऐतिहासिक काव्यनिशा के संचालक/संयोजक/कवि प्रिय शिष्य अजीत श्रीवास्तव की कुछ पंक्तियां काव्यपाठ के रूप में आप सुन लें, तत्पश्चात आपके आदेश का पालन करूंगा क्योंकि आपका प्यार और स्नेह ही हमारी पूंजी और ऊर्जा है. मैंने संचालन में भी काफ़ी समय लिया क्योंकि श्रोताओं का भारी उत्साह मुझे भी काफ़ी उत्साहित कर रहा था. मैंने सिर्फ ये पंक्तियां पढ़ी —

धूप मेरे गांव इतनी दूर से आती तो है,
मेरे मन की एक चिट्ठी आ के पढ़ जाती है.
भीड़ मेरी भावना को बूझ न पायी तो क्या?
सांस मेरे गीत को कुछ देर तक गाती तो है.

साफ़-सुथरी हो न हो पर राजधानी की तरफ़
मोड़ लेती यह सड़क कुछ दुर तक जाती तो है,
राजपथ पर भूंकते कुत्तों की दुम तो देखिए
है बहुत टेढ़ी मगर सीधी नज़र आती तो है.

नीरज दादा फिर माइक पर आये. इस समय सुबह के क़रीब ८.३० हो चुके थे. उन्होंने 'कारवां गुज़र गया गुबार देखते हुए' गीत सुनाकर कार्यक्रम का समापन किया और कहा कि अभी तक मेरे जीवन का यह पहला ऐतिहासिक आयोजन रहा.

श्रोताओं ने समापन के समय, हर हर महादेव के उद्घोष के साथ नीरज दादा को कई मालाएं पहनायीं. जाते हुए नीरज दादा ने मुझे आश्वस्त किया कि 'लो उगा सूरज' लोकार्पित करने मैं अवश्य आऊंगा.

कुछ प्रतिकूल परिस्थितियों के चलते मैं स्वयं के ख़र्च से 'लो उगा सूरज' २०१४ में ही प्रकाशित कर सका. फ़ोन पर नीरज दादा से मेरी बातें होती रहीं. उस दौर में वे अस्वस्थ भी रहे. उत्तर प्रदेश भारतीय भाषा परिषद के अध्यक्ष की हैसियत से उनकी कई तरह की गहरी ज़िम्मेदारियां भी रहीं. नीरज दादा को मैं जब अपना नाम फ़ोन पर बताता तो कहते अजीत तुम्हारा नंबर मेरे फ़ोन में सेव है, नाम बताने की आवश्यकता नहीं है. मैं तुम्हें स्वयं सूचना दूंगा कि मैं कब आऊंगा.

बीच-बीच में नीरज दादा का शुभ आशीष मुझे मिलता रहा. स्वस्थ होने के बाद दादा ने मुझे पहले 'लो उगा सूरज' काव्यकृति के लोकार्पण की तिथि २७ अप्रैल २०१५ प्रदान की. बाद में तिथि २८ अप्रैल शिफ़्ट हो गयी.

२८ को सुबह नीरज दादा ने फ़ोन किया — मैं अपने वाहन से इस समय लखनऊ से चल रहा हूं. हर दो घंटे पर मैं सूचित करता रहूंगा कि मैं कहां तक पहुंचा हूं. वाहन में दो डॉक्टर और पी. ए. और एक कोई और व्यक्ति साथ रहे. सुल्तानपुर पहुंचने पर मेरी बातचीत उनके पी. ए. से हुई. दो मिनट की वार्ता हुई. उन्होंने कहा इस समय रेस्ट कर रहे हैं. डॉक्टर ने उन्हें रेस्ट करने को कहा. रेस्ट करने से पहले आपका नं. दिखाकर उन्होंने कहा कि जौनपुर अथवा बाबतपुर पहुंचने पर फ़ोन मिलाकर मुझे देना, मैं अजीत से बात करूंगा. क़रीब १ बजे नीरज दादा का फ़ोन आया. पूछा कि अजीत कहां हो? मैंने कहा दादा मैं सर्किट हॉउस में हूं. दादा ने कहा — इस समय मैं बाबवपुर आ गया हूं. लगभग ३० मिनट में मैं सर्किट हॉउस पहुंच जाऊंगा. वाराणसी के किसी को भी यह विश्वास नहीं था कि नीरज आ रहे हैं. मुझसे डॉ. काशीनाथ सिंह जिन्हें समारोह की अध्यक्षता करनी थी फ़ोन कर २७ की रात्रि में कहा था कि अजीत नीरज नहीं आ रहे हैं, मेरी वार्ता उनसे हुई थी. वे अस्वस्थ चल रहे हैं. डॉ. काशीनाथ सिंह ने फ़ोन पर मुझसे कहा कि इस समय नीरज को दो लोग उठा-बैठा रहे हैं. दो डॉक्टर साथ में लगे हैं. तुम कैसे कह रहे हो कि कल वारासणी आ रहे हैं. मैंने कहा था डॉक्टर साहब आप पूरा विश्वास रखें २८ अप्रैल को हर हालत में 'लो उगा सूरज' का लोकार्पण करने नीरज दादा आ रहे हैं. 'यश भारती पुरस्कार' और 'पत्रकारिता भूषण' सम्मान से सम्मानित डॉ. राममोहन पाठक जी से २७ को मेरी वार्ता हुई थी उन्होंने, मुझसे फ़ोन पर पूछा था कि नीरज दादा आ रहे हैं. मैंने कहा सौ प्रतिशत. फिर उन्होंने कहा मैं 'सर्किट हॉउस' कितने बजे आ जाऊं? मैंने कहा डॉ. साहब आप २.३० बजे तक 'सर्किट हॉउस' अवश्य आ जायें. यही समय मैंने प्रो. ए. के. श्रीवास्तव, डॉ. पूर्णिमा भारतीय, आदि को भी बताया था.

तीन बजे के लगभग वाहन सहित नीरज दादा सर्किट हॉउस पहुंचे. मैं सभी साहित्यकारों सहित उनके वाहन तक गया. वहां से वाहन स्थल तक हम सभी ले गये. वह क्षण

ग़ज़ल

हम्माद खान

सोचता था कि वो इक बार तो मुड़ कर देखे,
रुक ही जाऊं वो अगर मुझको नज़र भर देखे.
आंख उठा कर मुझे आईना समझ कर देखे,
मेरी नज़रों में कोई ख़ुद को, संवर कर देखे.
फ़ासले से कहां समझेगा कोई गहराई,
दिल समंदर है मेरा कोई उतर कर देखे.
उसकी आंखों का हर अंदाज है क़ातिल तौबा,
हंस के देखे वो मुझे चाहे बिगड़ कर देखे.
मैंने पलकें तेरी राहों में बिछा रखी हैं,
इन्हीं राहों से कभी तू भी गुज़र कर देखे.

सी. १६, सारनाथ, अणुशक्तिनगर, मुंबई-४०००९४

मेरे लिए अद्भुत रहा. मैं उनके चरणों में गिर गया. नीरज दादा ने कहा अजीत सिर्फ़ तुम्हारे लिए, 'लो उगा सूरज' के लिए आया हूं. मैंने कहा दादा सब आपके श्री चरणों की और विशेष रूप से बाबा श्री काशी विश्वनाथ जी की महती कृपा है. सभी नीरज दादा को अपने बीच पाकर भाव विह्वलित हो रहे थे.

डॉ. राममोहम पाठक जी की अध्यक्षता में हम सभी साहित्यकारों ने प्रथमत: नीरज दादा को माल्यार्पण किया. अंगवस्त्रम के साथ 'विश्व गीत गौरव अलंकरण' से विभूषित किया. इसके बाद मेरी काव्यकृति 'लो उगा सूरज' का नीरज दादा ने लोकार्पण करते हुए मुझे स्वयं हस्ताक्षरित यह सम्मान–पत्र अपने कर कमलों द्वारा आशीष स्वरूप प्रदान किया :

कवि अजीत श्रीवात्सव (चपाचप बनारसी) के ६० वर्ष होने पर आयुर्विद्यायशोबलः

अपनी गंभीर अस्वस्थता के बावजूद सन १९८३ में आयोजित 'नीरज निशा' जिसमें मैंने ७ घंटे काव्यपाठ कर एक इतिहास रचा था, मेरे अब तक के जीवन का वह अकेला आयोजन था. अजीत को मैंने वचन दिया था कि तुम मेरे प्रिय शिष्य हुए लोकार्पण करने मैं ज़रूर आऊंगा, आया हूं. अजीत की काव्यकृति 'लो उगा सूरज' मैंने ख़ूब पढ़ ली है. नयी पीढ़ी जब तक मुझे अपना दादा मानती रहेगी तब तक नयी पीढ़ी का मैं विशेष ऋणी रहूंगा. अजीत श्रीवास्तव की — 'लो उगा काव्यकृति' बनारस की जीवंतता और रचनात्मकता की सशक्त पहचान है. प्रिय अजीत श्रीवास्तव को आज 'नवनीत-व्यंग्य गौरव' अलंकरण से विभूषित करते हुए अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूं.

चार दशक से अजीत श्रीवास्तव द्वारा की गयी निःस्वार्थ साहित्य सेवा का मूल्य कदापि नहीं चुकाया जा सकता. 'लो उगा सूरज' के प्रिय कवि अजीत श्रीवास्तव को तुलसी बाबा का यह मूल मंत्र —

'धीरज धरहि सो उतरहि पारा' **गोपाल दास 'नीरज'**

मेरे लिए इस सम्मान से बड़ा कोई भी सरकारी/ग़ैर सरकारी देश/विदेश का सम्मान नहीं है. २०१५ में ही कुछ ऐसा संयोग हुआ कि कथा-गौरव समीक्षक डॉ. विवेकी राय के साहित्यिक संघ के अधिवेशन में उन्होंने मुझे 'साहित्य श्री' सम्मान दिया था.

डॉ. विवेकी राय जी भी काफ़ी अस्वस्थ थे. स्वस्थ होकर अपनी बेटी के यहां वाराणसी आये, डॉक्टरों ने बोलने के लिए मना किया था. फिर भी हंसमुख चेहरे के साथ उन्होंने गले लगाया, भरपूर आशीर्वाद प्रदान किया. दु:खद रहा कि इतने बड़े व्यक्तित्व का कुछ ही दिनों बाद देहावसान हो गया. उतना बड़ा समीक्षक कथाकार कभी फिर पैदा होगा, होगा की भी नहीं. इसे काल ही बता सकता है.

'कथाबिंब' के आमने–सामने स्तंभ के अपने प्रिय सुधी पाठकों यदि मैंने अधिक समय ले लिया हो मुझे अपना प्रिय मानते हुए स्वीकार करेंगे!

मेरी इन चार पांक्तियों के साथ —

राह अनगढ़ ही सही गढ़ते चलो,
लो खुली पुस्तक इस पढ़ते चलो,
लिफ़्ट कोई यदि तुम्हारी है नहीं,
सीढ़ियां दर सीढ़िया चढ़ते चलो.

(पुन: पिछले साल १९ जुलाई २०१८ को नीरज दादा भी दिवंगत हो गये. अब सब स्मृतियां ही शेष हैं.)

शिवकृपा, सी.४/२०४-१
काली महल (सराय गोवर्धन)
वाराणसी (उ. प्र.)
मो. : ९११९८३०२३५०

कविता

तादात्म्य

मृत्युंजय उपाध्याय

देश और हम
कहीं अलग-अलग नहीं हैं,
वीरता का संकल्प लेकर,
जियें या मरें देश की खातिर
फिर भाषा, धर्म, जाति के नाम पर
विष बोना, उसके पौधे को सहलाना, पोसना,
कितनी बड़ी कृतघ्नता है,
ऐसे देशद्रोहियों का खुलेआम
संहार ही न्याय की पुकार है,
देश की रक्षा का आधार है.

वृंदावन, मनोरम नगर,
एल. सी रोड,
धनवाद-८२६००१ (झा. खं.)
मो- ९०६५११९७४२९

सागर/सीपी

'कविता मैं नहीं सोचता, कविता स्वयं मुझे सोचती है!'

श्रीमती विभा सिंह

(कवि सूर्यभानु गुप्त से विभा सिंह की बातचीत)

▸ आपके कविता संकलन 'एक हाथ की ताली' के फ़्लैप पर आपके जन्म और कवि-जन्म के सामने दो तिथियां दी गयी हैं. इसका क्या कारण है?

मैं जन्म लेते ही कविता नहीं करने लगा था. उसकी शुरुआत तो लगभग बारह वर्ष की अवस्था में जाकर हुई थी. जैसे किसी योद्धा का जन्म दिन उसी दिन होता है, जब वह तलवार हाथ में पकड़ना सीखता है, मैं समझता हूं, उसी तरह एक कवि उसी दिन जन्म लेता है, जिस दिन वह क़लम हाथ में लेकर कुछ लिखना शुरू करता है.

▸ आपको कविता के संस्कार कहां से मिले? साहित्यिक पठन-पाठन से या और भी कोई कवि-साहित्यकार आपके घर-परिवार आदि में रहा है?

क्या साहित्य है और क्या नहीं, या पठन-पाठन के आधार पर भला बारह वर्ष का एक बच्चा इसे कितना समझ पायेगा पता नहीं, लेकिन कविता के संस्कार मुझे विरासत में नहीं मिले, क्योंकि मेरे परिवार या वंश में मुझसे पहले कोई कवि-साहित्यकार नहीं हुआ है. यही कहा जा सकता है कि कविता बीज रूप में शायद मेरे अंदर कहीं दबी हुई थी या शायद पूर्व जन्म के संस्कार के कारण जो मेरी बारह वर्ष की आयु होते-होते कोंपलों की तरह मेरे अंदर से अपने-आप फूट कर बाहर आने लगी, पुष्पित-पल्लवित होने लगी.

▸ आपकी इस बात पर पूछने का मन करता है कि कवि जन्मजात होता है या किसी विशेष स्थिति में बन जाता है?

बचपन ही से कोई कविता करने लगे यह बात तो गले से नीचे उतरती है लेकिन इसे मानना जरा मुश्किल है कि पैदा होते ही कोई कविताई करने लगे. यह अविश्वसनीय है. मेरे विचार से 'जन्मजात' शब्द को स्थूल अर्थ में न लेते हुए, इस रूप में समझना ज़्यादा ठीक होगा कि जिन्हें 'जन्मजात' कवि कहा जाता है, कवित्व के बीज उनमें कुछ अधिक होते होंगे जो अन्य कवियों के मुक़ाबले उचित खाद-पानी और अनुकूल वातावरण मिलने पर बहुत जल्दी खिल उठते होंगे और उन्हें समाज के सामने इतनी कम या कच्ची उम्र में ले आते होंगे कि लोग उन्हें जन्मजात कवि के रूप में पुकारने लगते होंगे.

▸ आपको कविता लिखने की प्रेरणा कैसे मिली?

यह तो पता नहीं क्योंकि मेरी १० वर्ष की उम्र में अपने पिता की मृत्यु के अलावा मेरे साथ कोई ऐसी अप्रत्याशित घटना या दुर्घटना नहीं हुई, और किसी व्यक्ति-विशेष के प्रभाव के कारण मैं कविता लिखने लगा होऊं ऐसा भी कुछ नहीं हुआ. बस इतना बता सकता हूं कि मैं छठवीं या सातवीं क्लास में था, तभी से पंक्तियां जोड़ने लगा था. लेकिन उस समय इसका आभास नहीं था कि यह शौक़ एक दिन किसी काव्य-यात्रा में बदल जायेगा. यूं समझिए कि कविता मुझको, अंग्रेज़ी में जिसे 'गॉड्स गिफ़्ट' कहते हैं बस, कुछ इसी तरह मिली है.

▸ उस समय की लिखी हुई कोई कविता या कविताओं की कुछ पंक्तियां याद हैं आपको?

कविता तो नहीं कहूंगा उन्हें, बस पंक्तियां जोड़ना या फिर तुकबंदी कह सकते हैं. ज़रूर याद हैं. उस समय की दो-तीन कविताएं कुछ-कुछ याद हैं अब भी. एक कविता 'फूल' पर थी — जो कुछ इस तरह थी, 'हरे-भरे सुंदर उपवन में/खिले हुए ओ प्यारे फूल! बिना किसी झूले के कैसे/ख़ूब रहे डाली पर झूल? मस्त पवन में, खुले गगन में/ ख़ुश हो कितने प्यारे फूल.

एक किशोर मानसिकतावाली कविता भी लिखी थी, जिसकी दो-चार ही पंक्तियां अब याद रह गयी हैं. मैं उस समय आठवीं क्लास में पढ़ता था. कविता थी —

यह विरह वेदना कैसी / मैं बाट जोह कर हारा,

क्यों कसक हृदय में ऐसी / ज्यों टूटा नभ से तारा.

बस इसी तरह की कुछ और कविताएं भी थीं जिनमें एक 'राम भरोसे होटल' शीर्षक से भी थी जो एक पुराने और जर्जर होटल की हालत बयान करती थी, मगर अब याद नहीं रही.

▶ चलिए कविताएं तो आप बड़ी कच्ची उम्र से ही करने लगे थे, लेकिन उनके प्रकाशन की शुरुआत कब से हुई?

किशोर मानसिकतावाली कविता सोलह वर्ष की उम्र में शायद, १९५६ में 'सरिता' में छपी थी. सबसे पहले छपनेवाली यही कविता थी. फिर १९५८ में 'नवभारत टाइम्स', मुंबई, १९५९ में 'धर्मयुग' तथा १९६१-६२ तक तो मेरा 'कल्पना', 'ज्ञानोदय' जैसी अपने समय की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में छपना शुरू हो चुका था.

▶ आपका कविता संकलन पहली बार कब प्रकाशित हुआ?

पिछले पचास वर्षों के दौरान विभिन्न काव्य-विधाओं में लिखी गयी चुनिंदा कविताओं का संकलन जिसका नाम 'एक हाथ की ताली' है, पहला संस्करण दिसंबर १९९७ में वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली से आया. उसका चौथा संस्करण भी मैंने किसी के हाथ में देखा है. जानकारी मिली है कि चौथा संस्करण सन २००२ में आया था और इतनी बड़ी संख्या में छापा गया था कि वही २०१९ में भी बराबर बिक रहा है.

▶ अपने आरंभिक दिनों में किन-किन कवियों ने प्रभावित किया आपको?

गोस्वामी तुलसीदास और कबीरदास ने बहुत ज़्यादा प्रभावित किया है मुझे. ये सचमुच बड़े और महान कवि हैं. इनके अतिरिक्त अमीर खुसरो, मीराबाई, सूरदास, रहीम, रसख़ान, बिहारी, भूषण जैसे तमाम सर्वकालीन कवियों से लगाकर भारतेंदु हरिश्चंद्र, निराला, प्रसाद और मैथिलीशरण गुप्त के साथ ही माखनलाल चतुर्वेदी, दिनकर, बच्चन, धर्मवीर भारती, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, अज्ञेय, रमानाथ अवस्थी, मुक्तिबोध, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, कुंवर नारायण, शमशेर बहादुर सिंह, गोपाल सिंह नेपाली, भारत भूषण, मुकुट बिहारी 'सरोज', पं. प्रदीप, श्रीकांत वर्मा और भवानी प्रसाद मिश्र तक काव्य-गंगा की जो रसमयी परंपरा रही है, काव्य-भाषा के संस्कार मुझको उसी से प्राप्त हुए हैं. लेकिन उर्दू को भी मैं हिंदी की ही एक शैली मानता हूं और मीर, ग़ालिब, जोश, इकबाल, फिराक, गोरखपुरी, फ़ैज से लेकर निदा फ़ाजली, नरेश सक्सेना, मंगेश डबराल, वीरेन डंगवाल तथा विष्णु खरे व राजेश जोशी तक अनेक कवियों ने मुझे किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है. मेरी कविता की भाषा गढ़ने में हिंदी के साथ उर्दू का भी योगदान रहा है, जिसे मेरी कविताओं द्वारा आसानी से समझा जा सकता है.

▶ आप कविता किस तरह लिखते हैं? कविता सूझती कैसे है आपको?

कविता बाहर की नहीं, अंदर की चीज़ है. कविता का रिश्ता कवि की अंतरात्मा से होता है, लिहाज़ा पाक शास्त्र की तर्ज़ पर यह बता पाना मुश्किल है कि फलां विधि से कविता तैयार की जा सकती है. किसी घटना या वस्तु से परोक्ष या अपरोक्ष रूप से प्रभावित होने के बाद अंतर्चेतना में धीरे-धीरे पकते रहने के बाद कोई चीज़ कब, कहां और कैसे कविता रूप में स्फुटित हो जायेगी यह कहा नहीं जा सकता. जैसे बिजली की क्षणिक कौंध में, उसकी चमक में कोई धागे में मोती या सुई में धारा पिरो ले, बस कुछ इसी तरह वह अचानक ही कवि के हाथ आ जाती है. किसी ने कहीं कहा है कि कविता एक रहस्य भरा शतरंज का खेल है, जिसकी बाजी और मुहरें कुछ इस तरह बदलते हैं कि कई बार हैरान रह जाना पड़ता है. ऐसा लगता है जैसे आप नहीं, कोई और खेल रहा हो.

▶ गुप्त जी कविता और आपका साथ तो बचपन ही से है. कविता क्या है आपके लिए?

कविता एक 'गॉड्स गिफ़्ट' है मेरे लिए. असंभव को साधने की कला है, शब्दों की साधना, शब्दों का तप है कविता. आपकी इसी बात पर मुझको १९३३ के नोबल पुरस्कार विजेता, रूसी कवि ईवान बुनिन की कुछ काव्य पंक्तियां याद आती हैं जो शब्दों की महत्ता की बात करती हैं —

ये दुनिया एक क़ब्रिस्तान है और क़ब्रिस्तान बोलता नहीं, केवल प्राचीन शिलालेख ही बोलते हैं / सिर्फ़ ज़िंदा हैं शब्द हमारे पास, शब्द के सिवाय कोई संपदा नहीं है, इसलिए दोस्तो, शब्द को सम्हाल कर रखो!

शब्दों की ज़मीन पर खड़ी कविता एक ऐसी डोर है जो पतंग की तरह उड़ाकर मुझको धरती से आकाश तक ले जाती है. कविता अंदर-बाहर दोनों ओर से खुलने वाली एक

ऐसी खिड़की है मेरे लिए, जो मुझको दीवार होने से बचाती है. कविता आंखों से नहीं कानों से पढ़ने की चीज़ है मेरे लिए. कानों को जिसके शब्दों का संगीत कर्णप्रिय लगे, वही कविता जंचती है.

▸ कविता से क्रांति करने की बात भी बहुत की जाती रही है, मुख्य रूप से जनवादी और वामपंथी कविता में. कविता द्वारा क्रांति की बात कितनी संभव है?

इतिहास गवाह है कि आज तक किसी देश में सिर्फ़ कविता के कारण कभी क्रांति नहीं हुई. किसी भी क्रांति के पीछे वर्षों की मानवीय पीड़ाएं और अनगिनत बलिदानों का सिलसिला होता है तथा इतना कुछ होने के बाद तब कहीं जाकर क़लम कारगर होती है. सिर्फ़ कविता से क्रांति करने का दावा सिवाय किसी शेखचिल्ली या मुंगेरीलाल के दिवास्वप्न से ज़्यादा और कुछ नहीं है. कविता से क्रांति की बात जैसा ही दावा हिंदुस्तान की सबसे पुरानी सियासी पार्टी जब-तब प्रिंटिंग व इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में करती रहती है कि इस देश को आज़ादी सिर्फ़ उसी पार्टी के कारण मिली है जो कि सरासर एक बकवास के सिवा कुछ नहीं है. हक़ीक़त सभी जानते हैं कि भारत में सबसे पहली बार तिरंगा अंदमान निकोबार द्वीप समूह में सन् १९४३ में फहराया गया था नेताजी सुभाषचंद्र बोस द्वारा. उसे जीतने के बाद. इसके अलावा १८५७ का गदर तथा अनगिनत शहीदों का बलिदान भी आज़ादी मिलने का मूल कारण बना.

▸ कविता में किसी विचारधारा-विशेष की महत्ता को आप कहां तक उचित समझते हैं?

उसी सीमा तक कि उसके बोझ से कविता की कमर टेढ़ी न होने पाये. जिस कविता पर एक तरफ़ा रैचारिक आग्रह का बोझ हो, वह दूर तक नहीं जा सकती. और देखा यही गया है कि ऐसी कविता अधिकतर सतही नारेबाजी और क़ाग़जी क्रांति की मिसाल बनकर रह जाती है तथा फ़िल्मी गीतों की तरह एक ही जैसी शब्दावली और मुहावरों का शिकार हो जाती है. ऐसे में रचनाशीलता का जो नुकसान होता है शायद उसी को लक्ष्य करके जां निसार अख़्तर जैसे प्रगतिशील उर्दू शायर ने कभी यह शेर कहा था —

क्या पता हो भी सके इसकी तलाफी कि नहीं,
शायरी तुझको बहुत रोज़ गंवाया हमने!

'तलाफी' का अर्थ क्षतिपूर्ति होता है. कविता में विचारधारा के संदर्भ में प्रख्यात कवि-लेखक रमेश चंद्र शाह की यह टिप्पणी भी बहुत महत्वपूर्ण है जिसमें कहा गया है कि विचारधारा की तंग गली में उलझा साहित्य राजनीति का पिछलग्गू हो जाता है. भारतीय और मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टियों से जुड़े प्रगतिशील लेखक संघ तथा जनवादी लेखक संघ जैसे लेखकीय संगठनों ने साहित्य के खुलेपन को बहुत क्षति पहुंचाई है.

▸ अर्थात राजनीति कविता का विषय नहीं हो सकती?

हो सकती है, लेकिन रचनाशीलता और लेखकीय ऊंचाई किसी राजनैतिक विचारधारा के चश्मे से नहीं तय की जा सकती. ऐसी रचनाओं में विचारधारा का आग्रह या दबाव इतना अधिक रहता है कि उनमें कविता तत्व अक्सर ढूंढे नहीं मिलता और इस तरह ही धूमधड़ाके वाली कविता राजनैतिक परिदृश्य बदलते ही बेमानी हो जाती है. भारत के पूर्व कवि-प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी का निजी अनुभव भी यही रहा है कि कविता तथा राजनीति साथ-साथ नहीं चल सकते.

▸ लेकिन आलोचकों ने साहित्य में विभिन्न विचारधाराओं और 'इज़्मों' के खांचे बना कर कविता के अलग-अलग स्कूल खड़े कर दिये हैं?

ये स्कूल नकली हैं, बोगस हैं, क्योंकि इनके पीछे किसी प्रकार की साहित्यिक निष्ठा नहीं है, बल्कि ये मदरसे बस इसी मंशा से खोले जाते हैं कि इनके माध्यम से स्वयं समेत अपने-अपने प्रियपात्रों को किसी तरह साहित्य में चर्चित और स्थापित करने-करवाने में सुविधा हो. किसी विचारधारा का पिछलग्गू बन कर कवि जो भी लिखेगा, रचनात्मक तौर पर वह लगभग बंजर होगा, इसलिए हर सच्चे और अच्छे कवि को एक समय के बाद किसी स्कूलिंग की ज़रूरत नहीं होती. अपना स्कूल वह स्वयं होता है.

▸ अच्छा, कविता आपकी नज़र में दिल की वस्तु है अथवा दिमाग़ की?

मैं उस उर्दू शेर से सहमत हूं जिसमें यह कहा गया है कि दिल अगर बेकार है तो शायरी बेकार है. बकौल अल्लामा (महाकवि) इकबाल —

अच्छा है दिल के पास रहे पासबाने-अक़्ल,
लेकिन कभी-कभी उसे तनहा भी छोड़ दे.

अर्थात यह उचित है कि दिल पर बुद्धि की पहरेदारी रहे, लेकिन कभी-कभी दिल को अकेला भी छोड़ दिया जाना चाहिए. कविता में बौद्धिकता का, चिंतन-मनन का स्थान उतना ही होना चाहिए जितना चाय में शक्कर अथवा दाल में नमक का. इसी संदर्भ में फिराक गोरखपुरी का ये शेर भी कम उल्लेखनीय नहीं है —

इसमें ग़ौरो-फ़िक्र का कुछ काम होता है ज़रूर,
सिर्फ़ ग़ौरो-फ़िक्र से होती नहीं है शायरी.

जो कविता पूरी तरह बौद्धिकता या दार्शनिकता पर आधारित होती है उसमें रस की गुंजाइश नहीं और रस कविता के लिए बहुत ज़रूरी है. कालजयी साहित्य में अपनी जगह बना चुकीं रचनाएं इसका प्रमाण हैं कि दिल से निकलने वाली कविता ही पाठकों के बीच शिव का धनुष तोड़ती आयी है. दिमाग़ी कविता तो उसे आज तक हिला भी नहीं सकी है, क्योंकि उसकी मानसिकता तो धनुष के बजाय सिर्फ़ छंद तोड़ने और लय छोड़ने में ही कविता की सार्थकता समझती है.

▶ आज भूमंडलीकरण के दौर में कविता के लिए छंद कितनी अहमियत रखता है आपकी नज़र में?

यदि कोई यह पूछे कि साहित्य में गद्य और पद्य के बीच क्या अंतर है, कौन-सी चीज़ दोनों के बीच विभाजन-रेखा खींचती है, तो उत्तर यही होगा कि छंद की अनुपस्थिति या उपस्थिति ही यह सुनिश्चित करती है कि वह गद्य है अथवा पद्य. सूर्य, चंद्रमा, तारों का अनवरत निकलना-डूबना, रात और दिन का आना-जाना, फूलों का खिलना-मुरझाना, इस अखिल ब्रह्मांड में भला कौन-सी चीज़ ऐसी है जो एक छंद, एक लय से नहीं बंधी है. वायु हो या नदी, आती-जाती ऋतुएं हों अथवा जन्म-मृत्यु का चिरंतन क्रम, संगीत के सुर हों या उन पर थिरकते किसी के नूपुर या फिर अंतरिक्ष में अनेकानेक ग्रहों उपग्रहों का अविराम भ्रमण. इस ब्रह्मांड में अवस्थित तमाम गोचर-अगोचर जीव, वनस्पतियां, सृष्टि के आरंभ से ही एक अटूट लय, एक शाश्वत छांदिकता से आपस में परस्पर बंधे हुए हैं.

आपने देख होगा कि विश्व का तमाम क्लासिक, कालजयी साहित्य छंदबद्ध है. यहां तक कि हमारा ज्योतिष और आयुर्वेद भी. पृथ्वी अपनी धुरी पर सूर्य के गिर्द और चंद्रमा पृथ्वी के गिर्द एक लय में घूमते हैं. हमारे श्वास-प्रश्वास समेत जीवन तथा प्रकृति से जुड़ी हर बात में, हर क्रिया में एक छंद, एक लय मौजूद है. जहां यह लय टूटी, प्रलय हुई. फिर यह लय चाहे प्रकृति की हो, जीवन की हो अथवा कविता की. लय से बेलय होकर छंद से स्वछंद होकर, जिसे हिंदी की शिखर समीक्षा ने उत्तर आधुनिकता बनाम भूमंडलीकरण की एक अनिवार्य शर्त मान लिया है, न कोई समाज दूर तक जा सकता है, न जीवन और न कविता ही. इसीलिए छंद और लय का महत्व कविता के लिए कई दृष्टियों से आवश्यक है, वर्ना गद्य और पद्य के बीच अंतर ही क्या रह जायेगा.

▶ किंतु समकालीन हिंदी कविता से तो छंद लगभग पूरी तरह बेदखल या खारिज कर दिया गया है. कविता के लिए उसे 'ऑउट ऑफ डेटेड' चीज़ मान लिया गया है. क्या कवि और क्या समीक्षक, दोनों ही उसे कविता के लिए ज़रूरी नहीं मानते. इस पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है?

छंद से पूरी तरह कट जाने के कारण ही समकालीन हिंदी कविता इस समय सबसे ज़्यादा लिखी जाने के बावजूद, सबसे कम पढ़ी जाने वाली विधा बन कर रह गयी है. और इस कविता के पाठक भी लगभग वही सारे लोग हैं जो स्वयं इसे लिखते हैं. आम पाठक इससे लगभग किनारा कर चुके हैं. मगर इन कथित कवियों द्वारा पाठकों की भूमिका को सिरे से ही नकार दिया गया है. पाठकविहीन रचनाकार ये भूल गये हैं कि तुलसी-कबीर और सूरदास इसलिए अमर हैं क्योंकि आज भी हिंदी में उन्हें सबसे ज़्यादा पढ़ा जाता है.

इस समय छंद की बंदिश के बिना, हिंदी में किसी का भी कवि बन जाना सहज संभाव्य हो चुका है. कविता एक सुगम फ़ैशन की तरह लिखी जा रही है. किंतु संकट यह है कि ओढ़ी हुई आधुनिकता और बौद्धिक व्यायाम से पैदा टेस्ट ट्यूब बेरी की तरह हुई इस कविता से कवि की पहचान नहीं बन पा रही है. इस कविता में हिंदी की जातीय कविता का चरित्र नहीं है. न छंद, न लय, न डिक्शन. इस कविता में लगभग सब कुछ ही संगठित, संयोजित, प्रायोजित, आरोपित शाब्दिक और उधार का है. इसमें कवि के व्यक्तिगत और सामाजिक अनुभवों का निजी स्पर्श नहीं है, जो पाठक की रुचि इस कविता के प्रति जाग्रत करे. लेकिन साहित्य में उपस्थित रहने की कोशिश लगातार जारी है, और इस कोशिश में जो लिखा जा रहा है, उसे नो मेंस लैंड की तरह न तो कविता कहा जा सकता है, न गद्यकाव्य.

▶ समय के साथ हर चीज़ बदलती है. कविता में यह बदलाव शायद उसी का परिणाम हो!

बदलाव एक सीमा तक होता है, इतना नहीं कि कोई चीज़ अपनी मूल पहचान, अपनी अपील ही खो दे. हिंदी में निरालाजी ने छंद की सीमा तोड़ी थी, लेकिन कविता की लय नहीं छोड़ी थी. हिंदी की पूरी नयी कविता छंदमुक्त होते हुए भी पूरी तरह लयमयी थी. इस कथित हिंदी की मुख्यधारा की समकालीन कविता में वह लय भी कहां है? और इसीलिए इस दुर्बोध और गद्यनुमा कविता से पाठक का रिश्ता क़ायम ही नहीं हुआ. इसके कवियों को ईमानदारी से सोचना चाहिए कि ऐसा किस कारण हुआ. इसके कवियों को ख़ुद से पूछना चाहिए कि शंकराचार्य, वल्लभाचार्य, हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों तथा पूर्ववर्ती कवियों ने जो शब्द कहे, वे श्लोक बने, मंत्र बने, पीढ़ियों की धरोहर बने, लेकिन हमारे शब्द, मात्र शब्द ही क्यों रह गये, वे मंत्र क्यों नहीं बन सके? क़ाग़ज से बाहर निकलकर वे लोगों के जीवन और स्मृति का हिस्सा क्यों नहीं बन पाये? इसके कवियों को ग़ौर करना चाहिए कि वे क्या लिख रहे हैं और किसके लिए लिख रहे हैं. इसी तरह के नसीहत बहादुरों को संबोधित करके एक बार डॉ. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा था कि ''आजकल जो लोग कविता का छंदहीन होना ज़रूरी समझते हैं, वे कविता की बिसमिल्लाह ही ग़लत समझते हैं. जिस कविता में छंद नहीं है, उसके कवि से कहो कि वह कोई और धंधा ढूंढ़ ले.''

लेकिन समीक्षक तो इसी कविता को हिंदी की मुख्यधारा की कविता बतला रहे हैं.

यदि यह मुख्यधारा की कविता है तो, मुख्यधारा के सिनेमा की तरह, मुख्यधारा के आदमी या आम पाठक की समझ में क्यों नहीं आ रही? जो चीज़ पढ़ने वाले को किसी भी स्तर पर स्पर्श नहीं करती, उसे आंदोलित नहीं करती, उसी को मुख्यधारा की कविता का प्रमाणपत्र देना राजनीति नहीं तो और क्या है? कवि आग्नेय ने 'साक्षात्कार' पत्रिका के अपने एक संपादकीय में हिंदी के बेईमान समीक्षकों और इस कविता के आत्ममुग्ध कवियों की इसी आपसी सांठगांठ की और इशारा करते हुए कभी लिखा था कि राजनीति की तरह साहित्य के संसार में भी घुसपैठियों, आतंकवादियों, माफ़िया गिरोहों और भोगवादियों का बोलबाला है. मनुष्य और समाज से निरपेक्ष, साहित्य की स्वतंत्रता का साम्राज्य बनाया जा रहा है. साहित्य के सच को मनुष्य के सच से बड़ा माना जा रहा है.

और इसीलिए आज पुस्तकों की दुकानों तथा देश भर में आयोजित होने वाले पुस्तक-मेलों में हिंदी का क्लासिक साहित्य, क्लासिक कविता, उपन्यास, व्यंग्य, तार-सप्तक, दिनकर, बच्चन, नागार्जुन, मुक्तिबोध, भवानी प्रसाद मिश्र, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, धर्मवीर भारती तथा देवनागरी में प्रकाशित उर्दू शेरो-शायरी की तमाम क़िताबें तो ख़ूब बिकती हैं, लेकिन हिंदी समकालीन कविताओं के संकलन इक्का-दुक्का ही कोई ख़रीदता है. हां, नरेश सक्सेना, अरुण कमल, मंगलेश डबराल तथा राजेश जोशी आदि कुछ कवि ज़रूर इसके अपवाद हैं.

▶ लेकिन अपनी अलोकप्रियता के बावजूद इस तरह की कविता बराबर लिखी जा रही है. इसके पीछे क्या कारण हो सकता है?

दरअसल इस तरह की कविता लिखनेवालों में उनका शुमार है जो साहित्य में पीएच. डी. या कोई और ऊंची डिग्री हासिल करके राष्ट्रीयकृत बैंकों, सरकारी संस्थानों, विश्वविद्यालयों तथा साहित्य अकादमियों में मोटे वेतन पर पदासीन हैं. इस तरह की कविता उन लोगों द्वारा लिखी जा रही है जो जीवन के अतिरिक्त साहित्य में भी अपना कैरियर बनाने, यश पाने, साहित्य अकादमियों द्वारा पुरस्कृत होने और पाठ्यक्रमों में शामिल होने का मंसूबा पाले रहते हैं. नये कवियों के लिए मुक्तिबोध तथा नागार्जुन प्रेरणा के सबसे बड़े स्रोत हैं. ये वे नाम हैं जिन्होंने कविता के वृक्ष को जीवन रस से सींचा था. जब कि इसके विपरीत आज की छंदहीन, रसहीन कविताओं के अधिकांश स्वनामधन्य रचनाकार साहित्य के वृक्ष पर उग आयी अमर बेलें हैं जो उसका रस चूसकर अपना नाम और कैरियर बनाते हैं तथा बदले में साहित्य के वृक्ष को सुखा देते हैं.

मगर इसका इलाज क्या है?

इसका इलाज समय है. समय-देवता सबसे बड़े समीक्षक हैं. वो सबको अपनी औक़ात बता देते हैं. उर्दू शायर निदा फ़ाजली ने इस तरह की कविता पर टिप्पणी करते हुए एक पत्रिका में लिखा है कि ''हर क्षेत्र का अपना भूगोल और इतिहास होता है. जब कोई कला इस समय-सिद्ध यथार्थ को झुठलाती है तो वह केवल तमाशा बन जाती है.'' और समकालीन कविता इसी तमाशे की एक मिसाल बन चुकी

है. इसके इस स्थिति तक पहुंचने का कारण बताते हुए अपने एक कविता संकलन की भूमिका में साहित्य-मनीषी डॉ. धर्मवीर भारती ने लिखा है कि कवि कविता के शाश्वत उपादानों के पास जाने, उन्हें आत्मसात करने के बजाय उन्हें परे धकेलकर उस छद्म बौद्धिकता, आधारहीन बड़बोलेपन और छूंछे शब्दजाल का सहारा लेने लगा, जो आलोचकों, विभिन्न वादों, साहित्यिक मठाधीशों की उदघोषणाओं के अनुकूल पड़ते थे. परिणामत: सायास लिखी हुई कविताओं का ढेर लगता गया, पर कवित्व की मर्मस्पर्शिता, शिल्प का स्वत: स्फूर्त गठन, अनायास मन को छूनेवाली आत्मीयता खोती गयी. वादों-विवादों, फ़रमानों-फ़तवों और छद्म बौद्धिक शब्दाडंबरों के बीच आज कविता का पूरा परिदृश्य एक विराट रेगिस्तान-सा लगता है और इसी रेत की अधिकता से चिंतित होकर अशोक वाजपेयी और डॉ. नामवर सिंह जैसे कवि-आलोचक लोग अब कुछ अर्से से 'कविता की वापसी' और 'कविता में छंद की प्रासंगिकता' की बातें करते नज़र आते हैं.

▶ तो कविता में पाठकीय हिस्सेदारी के लिए यह ज़रूरी है कि वह छंद की तरफ़ फिर से मुड़े?

कविता को पाठक से जोड़ने के लिए यह ज़रूरी है कि कवि अपने समाज, उसकी ज़मीनी सच्चाइयों, उसकी विशेषताओं, उसकी विसंतियों और जीवन के विविध रंगी अनुभवों से संपन्न हो तथा उसकी कविता किसी फ़ैशन के तहत न लिखी गयी हो. कविता छंद में हो तो बहुत अच्छा, न हो तो कम से कम उसमें एक लय मौजूद हो और यदि लय भी संभव न हो तो अपने कथ्य, शिल्प और सहज-सरल भाषा के स्तर पर इतनी असाधारण या बेजोड़ हो कि पाठक उससे जुड़ने के लिए विवश हो जाये. भाषिक अभिव्यक्ति का बुनियादी रूप होने का बावजूद कविता सिर्फ़ शब्द-विधान नहीं है. वह भाव, अनुभूति, छंद, लय, प्रवाह, गति एवं प्रभाव का एक जीवंत तथा मिला-जुला कलात्मक संयोजन है. संयोग से हिंदी में आज संभवत: इक्का-दुक्का कवि ही बचे होंगे, जो कविता के इस संयोजन की पूरी समझ रखते हैं और जिन्हें अपने रचना-कर्म पर पूरा भरोसा है और जिनकी कविता हर तरह से कविता होने की शर्तें पूरी करती है तथा आज की कविता लगती है.

▶ अच्छा, आधुनिक कविता किसे समझते हैं आप?

जो कविता पढ़ते ही पाठक के हृदय में सीधे उतर जाये. आधुनिकता एक निरंतर बदलते रहने वाली अवधारणा का नाम है. इसलिए आधुनिक कविता मैं उसे समझता हूं, जो चाहे जितना देश-विदेश घूमे, आकाश-पाताल छाने अथवा उत्तर आधुनिक या दक्षिण आधुनिक बने, लेकिन जिसकी गर्भनाल हमेशा अपने देश, अपनी मिट्टी और अपनी काव्य-परंपरा के साथ बराबर जुड़ी रहे. जो चाहे जिस काल में रची गयी हो, लेकिन पाठक को संवेदना के स्तर पर, हर काल में प्रभावित करने की क्षमता तथा 'क्लासी' साथ ही मासी की सिफ़त भी स्वयं में रखती हो. फिर चाहे वह छंद में हो, मुक्तछंद में हो, गीत हो अथवा ग़ज़ल, इससे कोई अंतर नहीं पड़ता.

▶ विभिन्न काव्य विधाओं के साथ-साथ अल्प मात्रा में हास्य व्यंग्य में भी हाथ आजमाया है आपने?

देखिए! सायास लेखन मैंने जीवन में कभी नहीं किया. अगर बड़बोलापन न समझा जाये तो मैं उर्दू के मशहूर लेखक सआदत हसन मंटो ही के अंदाज़ में कहना चाहूंगा कि कविता मैं नहीं सोचता, कविता स्वयं मुझे सोचती है. बचपन से ही मेरी आदत रही है कि जब भूख लगे तभी खाओ, जब लिखे बिना न रहा जाये तभी लिखो. हास्य-व्यंग्य विधा में मेरी गिनती की ही रचनाएं हुई हैं, लेकिन जितनी भी हुई हैं सब की सब 'काग़द लेखी' नहीं बल्कि 'आंखिन देखी' वाली हैं. 'भारत दर्शन: कुर्सी के पीछे', 'पिताजी का बच्चा', 'भूगोल का इतिहास', 'चमचा', 'महानतम', 'फ़ॉरेन से आये हैं' तथा 'कुर्सी' और 'पेड़' पर आधारित छोटी कविताएं आदि सभी उसी स्थिति में काग़ज़ पर उतरी हैं जब बग़ैर लिखे चारा नहीं था मेरे लिए या जब तक मैं उन्हें लिखने के लिए पूरी तरह बाध्य नहीं हो गया. मेरा सारा लेखन स्वत: स्फूर्त है. किसी विधा में अपने को मनवाने के लिए, कुछ पाने के लिए, कहीं पहुंचने के लिए मैंने कभी कुछ नहीं लिखा. कविता मेरे लिए साध्य है, कहीं पहुंचने का, कुछ पाने का साधन या सीढ़ी नहीं है. हास्य-व्यंग्य भी जीवन का एक नॉर्मल रंग है. शायद इसीलिए उसमें भी कुछ रचनाएं हो गयीं बावजूद इसके कि वह मेरी रचनाशीलता का मुख्य रंग नहीं है.

▶ आप अपनी ग़ज़लों के कारण भी विशेष रूप से जाने जाते हैं. हिंदी ग़ज़ल जो इतनी ज़्यादा लोकप्रिय हुई पाठकों के बीच, उसका क्या कारण समझते हैं आप?

मिर्जा ग़ालिब का शेर है —

देखना तकरीर की लज़्ज़त कि उसने जो कहा,
मैंने ये जाना कि गोया ये भी मेरे दिल में है।

अपने मन की बात, अपने सुख-दुख की छवियां अपने ही शब्दों में पाठक को ग़ज़ल में दिखाई दीं. आत्मरति में डूबी समकालीन हिंदी कविता के कुंठित और एकरस दायरे से निकलकर, ग़ज़ल ने पाठक से संवाद स्थापित किया और यही सफलता उसकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण बना. ग़ज़ल में एक और कमाल की ख़ूबी है. कविता या गीत में जिस जीवन-सत्य, युग-सत्य अथवा काव्य-सत्य को व्यक्त करने के लिए कई या बहुत सारी पंक्तियों की ज़रूरत पड़ती है, ग़ज़ल उसे हिंदी के दोहे की तरह केवल दो ही पंक्तियों में, बड़े ही नपे-तुले, बड़े ही कम और सटीक शब्दों में बयान कर देती है. मेरी इस बात की पुष्टि मशहूर लेखिका कुर्तुल ऐन हैदर द्वारा ग़ज़ल के फ़ॉर्मेट पर कभी दिये गये बयान से भी होती है कि ग़ज़ल के एक शेर या मिसरे में एक पूरी दुनिया होती है. गागर में सागर. फ़िक्शन में पूरी बात फैला कर बतानी पड़ती है. बहादुर शाह जफ़र के उस्ताद, शायर इब्राहीम 'जौक' का एक शेर है —

लायी हयात, आये, कजा ले चली, चले,
अपनी ख़ुशी न आये, न अपनी ख़ुशी चले

इसके लिए पूरा एक अफ़साना लिखिए, एक नॉवेल लिखिए. एक और शेर है —

'अनीस' दम का भरोसा नहीं ठहर जाओ,
चिराग लेके कहां सामने हवा के चले.

तस्वीर बन जाती है, चित्र बन जाता है, मंजर देखिए. ग़ज़ल की इसी शक्ति का लोहा अपने विभिन्न व्यक्तव्यों और लेखों आदि में श्री अज्ञेय, भवानी प्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती, शरद जोशी तथा कमलेश्वर जैसे प्रख्यात लेखकों ने भी समय-समय पर माना है जिन्होंने ख़ुद कभी ग़ज़ल नहीं लिखी. संक्षेप में मैं समझता हूं हिंदी में कविता की वापसी ग़ज़ल के माध्यम से ही संभव हुई है और यही उसकी लोकप्रियता का कारण भी है.

▶ लेकिन इधर बहुत कुछ ऐसी चीज़ें भी ग़ज़ल के नाम पर छप-छपा रही हैं, जिन्हें ग़ज़ल मानना संभव नहीं है.

बात आपकी सही है, इस तरह की ग़ज़लों को देखकर मुझे भी लगा है जैसे उनका गर्भपात हो गया हो. या उनके साथ रेप जैसी वारदात हुई हो, लेकिन इसके लिए संपादक भी कम ज़िम्मेदार नहीं हैं. जिस विधा की आपको समझ नहीं है, उसे लोकप्रियता के कारण आप अपने पत्रों में क्यों छाप रहे हैं? ग़ज़ल लिखने, समझने और प्रकाशित करने के लिए यथेष्ठ साहित्यिक समझ की दरकार होती है, वैसे भी वे ग़ज़ल की तरह नहीं बल्कि फ़िलर की तरह छापते हैं. जगह बच रही है तो उसी साइज़ की ग़ज़ल लगा दो बस! क़ब्र की साइज़ के मुर्दे को दफ़नाने की तरह.

▶ ग़ज़ल संबंधी इस समझ का इतना अभाव क्यों है?

हिंदी ग़ज़ल की दशा और दिशा को समझने के लिए जरा विस्तार में जाना होगा तथा छायावाद से पहले छायावादोत्तर काल तथा प्रगतिशील दौर से, गुज़रते हुए उसकी वर्तमान काल तक की यात्रा पर दृष्टि डालनी होगी. हिंदी में ग़ज़ल का श्रीगणेश कुछ लोग कबीर, तो कुछ लोग अमीर खुसरो से मानते हैं. लेकिन मज़े की बात यह है कि हिंदी का अधिकांश प्राध्यापक वर्ग ग़ज़ल का आदिदेव या गणेशजी दुष्यंत कुमार को मानता पाया जाता है. ग़ज़ल का प्रयोग हिंदी में मुख्य रूप से सबसे पहले भारतेंदु हरिश्चंद्र, निराला, प्रसाद, हरिऔध, त्रिलोचन, शमशेर बहादुर सिंह, बलबीर सिंह रंग, बालस्वरूप राही, चंद्रसेन 'विराट', सूर्यभानु गुप्त, ज़हीर कुरेशी, भवानी शंकर, हनुमंत नायडू तथा श्याम प्रकाश अग्रवाल आदि जैसे कई कवियों ने अपने-अपने ढंग से किया और ग़ज़लें पत्र-पत्रिकाओं के अलावा स्वतंत्र ग़ज़लों संकलनों के रूप में भी सामने आती रहीं. मगर दुष्यंत कुमार इसके कई सालों बाद, आपातकाल के दौरान 'सारिका' तथा 'कल्पना' द्वारा अपनी ग़ज़लों के साथ सामने आये.

फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि ग़ज़ल को सबसे बड़ी सफलता हिंदी में दुष्यंत कुमार के रूप में मिली तथा पहली बार व्यापक रूप से ग़ज़ल की तरफ़ हिंदी पाठक का ध्यान गया क्योंकि आपातकाल के दौरान अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर सरकारी सेंसरशिप के चलते, भारतीय जन-मानस में जो घुटन, कुंठा और आक्रोश व्याप्त था, उसे वाणी देने का काम दुष्यंत कुमार ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से किया और वे हिंदी ग़ज़ल के हीरो बन गये. लेकिन दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों को मिली सफलता के मूल कारणों को पूरी तरह समझे बग़ैर, ग़ज़ल को तत्काल

प्रसिद्धि और लोकप्रियता पाने का सबसे आसान नुस्ख़ा या शॉर्टकट समझ कर, हिंदी के नये-पुराने, अज्ञात, अल्पज्ञात तथा विख्यात कवियों की एक बड़ी संख्या देखते ही देखते ग़ज़ल के मैदान में लंगोट बांधकर कूद पड़ी. हिंदी के नये-पुराने कितने ही यशाकांक्षी रचनाकार अपने-अपने सींग कटवा कर बछड़ों में शामिल हो लिये. इस तरह जब बग़ैर समझे-बूझे किसी सर्जन में एक पूरी भीड़ जुट जाती है तो उसकी परिणति अक्सर विसर्जन के रूप में होती है और यही इन यशकामी कवियों द्वारा आनन-फानन में लिखी गयी ग़ज़लों का भी हुआ और ग़ज़लगोई में आगे चलकर ये लोग सूरमा भोपाली साबित हुए.

▶ ग़ज़ल की विधा क्या वाकई इतनी अधिक मुश्किल है?

मेरा अनुभव तो यही कहता है वाकई! ग़ज़ल वास्तव में ऊपर से बहुत सरल-सुगम लगने वाली एक बहुत कठिन, श्रमसाध्य तथा धैर्यसाध्य प्राचीन काव्य-विधा का नाम है. इस विधा की बारीकियों को, इसकी काव्य-परंपरा को ठीक से समझे बग़ैर, दुष्यंत कुमार की कल्पनातीत लोकप्रियता को देखकर, ग़ज़ल के नाम पर फ़ास्टफूड की तरह ही सायास लेखन बड़े पैमाने पर किया गया. उसी का दुष्परिणाम घटिया, अधकचरी और फूहड़ ग़ज़लों के रूप में पत्र-पत्रिकाओं में आज भी दिखाई पड़ रहा है.

▶ ऐसी स्थिति में ग़ज़ल का भविष्य आपको कैसा लगता है?

मुझे तो निराश होने जैसी कोई बात नहीं लगती, क्योंकि इस समय हिंदी ग़ज़ल के क्षेत्र में, बहुत सारे नीमहकीमों और फ़ैशनेबल ग़ज़लकारों के अलावा दो तरह के रचनाकार भी सक्रिय हैं. एक वे जो दुष्यंत कुमार के वर्षों पहले से ही ग़ज़लें लिख रहे थे, और दूसरे कुछ वे लोग जो दुष्यंत के बाद ग़ज़लों में आये. ये दोनों ही तरह के रचनाकार ग़ज़ल की परंपरा, भावपक्ष, उसकी तकनीक और बारीकियों की समझ रखते हैं.

एक बात और ध्यान में रखना चाहिए और वह यह कि उर्दू में ग़ज़ल को अपने वर्तमान स्वरूप तक पहुंचने में लगभग छः सौ वर्ष गुजराती व सिंधी में डेढ़ सौ वर्ष, तथा मराठी में पचासी वर्ष लगे हैं. इस दृष्टि से हिंदी में ग़ज़ल को अभी एक लंबा रास्ता तय करना है, क्योंकि वह लगातार विकास की प्रक्रिया से गुज़र रहा एक संभावनाशील काव्य-रूप है.

▶ आपने कई काव्य-विधाओं में काम किया है, जिसमें एक गीत विधा भी है. लेकिन गीत को आलोचकों ने हाशिये पर डाल रखा है. इस पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है?

निष्पक्ष आलोचना का कर्तव्य पूर्व निर्धारित मान्यताओं या अपने गुटीय पूर्वाग्रहों को रचनात्मक साहित्य पर बलात थोपना नहीं है, बल्कि उन नियमों तथा कसौटियों की तलाश है जो श्रेष्ठ साहित्य की नींव में होते हैं. मूर्धन्य हिंदी आलोचक नामवर सिंह एक तरफ़ तो गीत को खारिज करते हुए यह कहते हैं कि 'गीत' तो गीत है, यह 'नवगीत' क्या है और दूसरी ओर अपनी पुस्तक का नाम 'कविता के नये प्रतिमान' रखते हैं. सिर्फ़ 'प्रतिमान' लिखने से उनका भी काम नहीं चलता, नये का विशेषण उसके आगे लगाना वे भी ज़रूरी समझते हैं. इसलिए साहित्य में दोहरे मानदंड अपनाने वाले ऐसे पूर्वाग्रही आलोचकों द्वारा गीत के प्रति बेरुख़ी अपनाने से हिंदी में गीतों की रचना तो बंद नहीं हो गयी, किंतु उसकी अकादमिक प्रतिष्ठा में थोड़ा फर्क़ ज़रूर पड़ा.

▶ आज के समय में जटिलताओं को देखते हुए गीत कितने प्रासंगिक रहे हैं साहित्य में?

देखिए, आदिकाल से ही हमारी लोक-संस्कृति और जीवन दोनों ही गीतधर्मी रहे हैं. कश्मीर से कन्याकुमारी तक भारतीय लोक जीवन में गीतों की महत्वपूर्ण भूमिका आज भी है. जन्म से लेकर मृत्यु तक हर संस्कार, हर अवसर पर गीत आज भी ज़रूरी हैं. गीत के बिना हमारा काम नहीं चलता. इस पृथ्वी पर जब तक मनुष्य है, गीत कभी अप्रासंगिक नहीं हो सकता, न लोक जीवन में, न साहित्य में. गीत पहले भी लिखा जाता था, आज भी लिखा जाता है और आगे भी बराबर लिखा जाता रहेगा. समय के साथ सिर्फ़ उसका स्वरूप बदलता रहेगा. गीत कविता की आदिम ज़मीन है. हमारी संस्कृति की, लोकजीवन की धरोहर है. और इस धरोहर को किसी पूर्वाग्रही खिलाड़ी आलोचक के प्रमाण-पत्र की ज़रूरत नहीं है. धरोहरें अपने दम पर ज़िंदा रहती हैं और पीढ़ी-दर पीढ़ी फलती-फूलती रहती हैं.

▶ आपने बच्चों के लिए भी काफ़ी बड़ी संख्या में गीत लिखे हैं, जबकि हिंदी में बच्चों के साहित्य को

(शेष देखें पृष्ठ ५४ पर...)

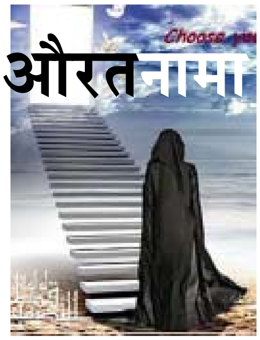

भारत-सेवा को समर्पित : 'भगिनी निवेदिता'

✍ डॉ. राजम पिल्लै

'निवेदिता'

माता निवेदिता को करता हूं नमन,
प्रकटमान है जो इस दास के मानस में.
कृपा के निवेदन के रूप में,
अंधकार में सूर्य के रूप में,
फ़सल के लिए वर्षा के रूप में,
अन्वेषियों के लिए महत संपदा के रूप में,
अकल्याणकारी तत्वों के लिए
ज्वाला-पुंज के रूप में!
माता निवेदिता को करता हूं नमन

– तमिल कवि सुब्रह्मण्य भारती (निवेदिता)

एक अभूतपूर्व संध्या – एक अलौकिक अनुभव :

सुश्री मार्गरेट एलिज़ाबेथ नोबल! एक आयरिश अध्यापिका, ओजस्वी वक्ता, गहन विचारक, क़लम की धनी. इन सबसे बढ़कर वंचितों, पीड़ितों की मददगार, मानव-मात्र की समानता और स्वतंत्रता की पैरोकार, 'सत्य' की अनवरत अन्वेषिका! लंदन, इंग्लैंड में रस्किन स्कूल की संस्थापिका!

नवंबर, १८९५ की एक संध्या! एक मित्र का निमंत्रण मिला कि एक सुप्रतिष्ठित महिला के यहां एक 'हिंदू योगी' धर्म के विषय में चर्चा करेंगे. योगी का नाम है — स्वामी विवेकानंद. जिन्होंने सन १८९३ में शिकागो, अमेरिका में आयोजित पार्लियामेंट ऑफ़ रिलिज़न में अपने वक्तव्य और व्यक्तित्व से बहुसंख्य जनों को प्रभावित कर दिया था. वे अमेरिका के कई स्थानों पर भाषण दे चुके हैं और इस समय लंदन, ब्रिटेन में पधारे हैं और बैठकों-सभाओं में 'धर्म' पर, 'हिंदू धर्म' पर उसके विविध आयामों पर वक्तव्य देते हैं, चर्चा करते हैं.

मार्गरेट ने उस बैठक की, उन घड़ियों की चर्चा करते हुए कालांतर में अपनी पुस्तक - 'The Master As I Saw Him' में अंकित किया कि स्वामी विवेकानंद ने हिंदू बहुदेववाद को जिस तरह से समझाया, गीता के उद्धरण दिये 'वे सब मुझमें रचते-बसते चले गये, जैसे धागे में एक-एक मोती पिरोया जाता है, वैसे ही...

पहले से ही मार्गरेट के मन-मस्तिष्क में कई द्वंद्व-अंतर्द्वंद्व थे; उसने स्वामी विवेकानंद की अन्य कुछ बैठकों में भी हिस्सा लिया, उनसे बहसें भी कीं और फिर अनायास ही यह समझ लिया कि ये ही उसके मास्टर हैं, ये ही गुरू हैं. यही बुलावा है जिसकी प्रतीक्षा अनजाने ही, वह अब तक के जीवन में करती आ रही थी. लगा, अब तक का जीवन एक अध्याय था और अब पन्ने पलट रहे हैं, एक नया अध्याय शुरू होने जा रहा है, शुरू हो चुका है.

मार्गरेट नोबल के परिवार-परिवेश में ऐसा क्या था जिसकी वजह से ब्रिटिश साम्राज्य की एक गौरांग, बुद्धि संपन्न, विद्या-संपन्न युवती एक 'हिंदू' स्वामी के वचनों-दर्शनों से इतनी प्रभावित हुई कि उसने उन्हें अपना 'गुरू—मार्गदर्शक' मान लिया, उनके मिशन-कार्य से उनके दर्शनों के कुछ ही महिनों के अंतर्गत अपने को सक्रिय रूप से इतना जोड़ लिया कि कुछ ही महीनों के भीतर उसमें यह तीव्र अभिलाषा भी जमी कि वह भारतभूमि में जाये, वहां के लोगों के बीच रहे, उनसे बहुत कुछ सीखे और उन्हें भी कुछ-कुछ सीख दे!

मार्गरेट अब जैसे काया-मात्र से योरप की धरती पर

थी उसका मन, मस्तिष्क और उसकी आत्मा भारत-भूमि पर विचरण करने लगे थे.

परिवार-परिवेश :

मार्गरेट एलिज़ाबेथ नोबल का जन्म २८ अक्तूबर १८६७ को आयरलैंड में हुआ था. उनका परिवार, चौदहवीं सदी में स्कॉटलैंड से आयरलैंड आया था. आयरलैंड के, ब्रिटिश द्वीप समूह से स्वतंत्र होने के संघर्षों का इतिहास बहुत पुराना है. मार्गरेट के दादा, सक्रिय रूप से स्वतंत्रता-आंदोलन में सहभागी थे. मार्गरेट के पिता सैम्युअल और माता मेरी ने अपने आपको स्वाध्याय और जन-सेवा के लिए समर्पित कर दिया था. मार्गरेट अपने पिता की प्रिय और सहयोगिनी बेटी थी. लेकिन जब वह दस साल की ही थी तब पिता की मृत्यु हो गयी और मार्गरेट की मां ने बच्चों के लालन-पालन के लिए किंडरगार्टन के बच्चों को पढ़ाने का काम शुरू किया और बाद में मार्गरेट भी अध्यापिका बनी. उसने पत्र-पत्रिकाओं में लिखना शुरू किया और लंदन आने के तुरंत बाद ही 'फ्री आयरलैंड' नामक क्रांतिकारी संस्था से भी अपने को जोड़ा. उसने स्वयं अपनी एक पाठशाला 'रस्किन स्कूल' की स्थापना की जिसमें बच्चों को बहुत छोटी उम्र से ही खेलों, कहानियों के माध्यम से, जानकारी, ज्ञान के संसार में ले जाया जाता था. अनुशासन था पर पाबंदियां नहीं थीं, स्वतंत्रता थी पर स्वछंदता नहीं थी, दूसरे की स्वायत्तता को दबाकर अपने विचारों को थोपने की तानाशाही कतई नहीं थी.

डॉ. राजम पिल्लै

मार्गरेट नोबल शिक्षिका और शिक्षाविद् बनीं, समाज-सेविका बनीं और चरम 'सत्य' को उपलब्ध करने के प्रयास में जुट गयीं. और जैसा कि आध्यात्मिक विश्व में कहा जाता है — 'शिष्य के सन्नद्ध होते ही गुरू भी पधार जाते हैं.' — और तभी नवंबर १८९५ को लंदन में एक निजी बैठक में मार्गरेट ने स्वामी विवेकानंद को देखा, सुना और फिर कई बार देखा और सुना और फिर उन्हें अपना 'मास्टर', अपना 'गुरू' मान लिया और इनके कार्य में अनायास ही जुड़ गयी.

स्वामी विवेकानंद का अमेरिका-योरप में कार्य :

शिकागो में पार्लियामेंट ऑफ़ रिलिज़न में यशस्वी सहभागिता के बाद स्वामी विवेकानंद लगभग ढाई साल तक अमेरिका, योरप में रहे. वे अपने गुरू रामकृष्ण परमहंस के आध्यात्मिक लक्ष्यों को साकार करने के लिए 'रामकृष्ण मिशन' की स्थापना करना चाहते थे; उसके लिए निधि की आवश्यकता थी; स्वामीजी ने अमेरिका में कई निजी सार्वजनिक सभाओं में भाषण दिये, कई समर्थकों का मानसिक—आर्थिक सहयोग प्राप्त किया.

मार्गरेट नोबल ने भी अपने भाषणों-लेखों के माध्यम से इस कार्य में बड़ी सक्रिय भूमिका निभायी लेकिन अब वह भारत आने के लिए आकुल-व्याकुल हो उठीं; उसे दिख रहा था कि उसका चरम मिशन भारत की सेवा ही है और उसे अब वहीं चला जाना चाहिए. उसने बार-बार स्वामीजी के सामने अपनी अभिलाषा व्यक्त की और उन्होंने उसे भारत के सामाजिक परिवेश, हिंदू मानसिकता, परंपरावादिता आदि की जानकारी दी यानि उसे मानसिक रूप से इस बात के लिए तैयार किया कि उसे अपनी योरपीय वेश-भूषा ही नहीं, सोच-मानसिकता को भी भारतीय परिवेश के अनुकूल ढालना होगा और अगर समाज-सेवा, अध्यात्म-यात्रा के मार्ग पर चलना है तो यह दुस्तर कार्य स्वयं के दृढ़ विश्वास, अड़िग निश्चय और अथक प्रयास के बल पर ही करना होगा. गुरू यहां सतत साथ नहीं होंगे, उनकी शुभकामनाएं और आशीर्वाद अवश्य ही उसे प्राप्त होते रहेंगे.

'भगिनी निवेदिता' का जन्म :

१८ जनवरी १८९८ को मार्गरेट नोबल कलकत्ता, बंगाल में अपने गुरू स्वामी विवेकानंद के पास पहुंच गयीं. २५ मार्च, १८९८ वह ऐतिहासिक, अभूतपूर्व दिवस था जब स्वामी ने उन्हें ब्रह्मचारिणी की दीक्षा दी और इस अभिनव जीवन में उनका नूतन नामकरण किया — 'निवेदिता' (बांग्ला भाषा में 'निबेदिता') ईश-कार्य के लिए अर्पिता, मानव-सेवा के लिए निवेदिता!

भगिनी निवेदिता का उसके बाद का जीवन स्वाध्याय, अध्यवसाय और अथक कर्मठता का था. 'शिक्षा' — विशेष रूप से बालिकाओं की शिक्षा उनका मुख्य ध्येय और संकल्प था लेकिन तत्कालीन सामाजिक परिवेश में वह बड़ा दुस्तर कार्य था. अभिभावक अपनी कन्याओं को पहले तो घर की देहरी लांघने नहीं देते थे और थोड़ी-बहुत उदारता और दुस्साहस दिखा भी दें तो कन्याओं का विवाह तो

बाल्यावस्था में कराना ही था, वरना सामाजिक लांछन और बहिष्कार का सामना करना पड़ता. अनेक प्रतिरोधों के बावजूद निवेदिता ने नवंबर, १८९९ को एक कन्या पाठशाला की स्थापना कर ही दी और गुरू रामकृष्ण परमहंस की सहधर्मचारिणी मां शारदादेवी के हाथों उसकी प्रतिष्ठापना करवायी.

सामाजिक कार्य :

निवेदिता की वाणी और लेखनी निरंतर समाज-उत्थान और समाज-सेवा में सक्रिय और ज्वलंत भूमिका निभाती रही; निवेदिता विवादों के घेरे में भी रहीं, तत्कालीन ब्रिटिश सरकार भी उनसे बहुत प्रसन्न नहीं थी. लेकिन जब बंगाल में भयानक प्लेग की महामारी फैली तो निवेदिता ने जान पर खेलकर जो सेवा-कार्य किया, उसकी सराहना सभी ने की.

भगिनी निवेदिता की यात्राएं :

निवेदिता ने स्वामी विवेकानंद और उनके शिष्यों के साथ भारत के कई स्थानों की यात्राएं कीं और फिर स्वामीजी के ही निर्देश पर एक बार फिर योरप और अमेरिका की यात्राएं कीं ताकि रामकृष्ण मिशन के कार्यों के लिए निधि एकत्रित की जा सके.

सन १९०२ के प्रारंभ में निवेदिता भारत लौटीं, मानो अपने गुरू के अंतिम आशीर्वाद पाने के लिए ही उनका आगमन हुआ. स्वामी विवेकानंद कहा करते थे कि उनकी आयु-सीमा ४० वर्ष तक की है. ४ जुलाई, १९०२ को स्वामी विवेकानंद चिर-निद्रा में सो गये.

भगिनी निवेदिता का उत्तर-जीवन :

स्वामी विवेकानंद की मृत्यु ने निवेदिता के जीवन-ग्रंथ में फिर एक नये अध्याय का प्रारंभ किया. निवेदिता प्रारंभ से ही यह जान चुकी थी कि दमनकारी ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त हुए बग़ैर भारत देश अपनी अस्मिता और अस्तित्व की न रक्षा कर सकता है और न उसे विकसित कर सकता है. अब उन्होंने खुलकर सार्वजनिक सभाओं में सम्मिलित होने और अपने मंतव्यों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने का निश्चय कर लिया.

लेकिन 'रामकृष्ण मिशन' के अंतेवासियों को राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने की अनुमति नहीं थी सो निवेदिता ने सार्वजनिक रूप से समाचार पत्र में लिखित रूप से यह घोषित कर दिया कि वे मिशन से बाहर जा रही हैं और कालांतर में स्वयं मिशन को भी यह सार्वजनिक घोषणा करनी पड़ी थी कि निवेदिता की गतिविधियों से मिशन का कोई सरोकार नहीं है क्योंकि वे मिशन की सदस्य नहीं रह गयी हैं.

क्रांतिकारियों की सहायिका – भगिनी निवेदिता :

भारत देश की आज़ादी की लड़ाई का एक ज्वलंत अध्याय इसी दौरान लिखा जा रहा था. लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय, बिपिनचंद्र पाल, एनी बेसंट, चित्तरंजनदास, अरविंद घोष. ऐसे-ऐसे कर्मवीर भारत की गुलामी की बेड़ियों को कड़ी-दर-कड़ी तोड़ने के मोर्चे पर डटे थे. बंगाल में वह 'बंग-भंग' और उसके कड़े विरोध का समय था. हिंसा-प्रतिहिंसा की चिंनगारियां छटकने लगी थीं.

भगिनी निवेदिता की पूरी सहानुभूति इन जांबाज देशप्रेमियों के साथ थी. सरकार को आशंका थी कि निवेदिता अपने आयरिश क्रांति के बीजों को यहां भी बो रही है, क्रांतिकारियों की मदद कर रही है, लेखनी से, सहभागिता से. निवेदिता को कारावास की सज़ा तो सरकार ने नहीं सुनाई जो उन्होंने थियोसॉफ़िकल सोसाइटी की अध्यक्ष एनी बेसेंट को दी थी लेकिन उन पर कड़ी निगरानी ज़रूर रखी जा रही थी.

भारत-सेवा को अर्पिता - भगिनी निवेदिता :

१३ अक्तूबर १९११ को ४३ वर्ष की आयु में दार्जिलिंग में भगिनी निवेदिता का देहांत हुआ. उन्होंने स्वयं ही अपने लिए जो क़ब्र-वाक्य सोच लिख रहा था वह आज भी वहां अंकित है :

'Here lies sister Nivedita who gave her all to India.'

भगिनी निवेदिता ने अपनी प्रतिभा, कर्मठता, तेजस्विता, संकल्पबद्धता सब कुछ अपने अंगीकृत देश भारत को समर्पित कर दिया था. स्वामी विवेकानंद की 'मानस-पुत्री' कहलाती 'निवेदिता' सचमुच ही एक नैवेद्य की तरह परमसत्ता के चरणों में अर्पित हो गयी थी.

भगिनी निवेदिता ने प्रचुर लेखन-कार्य किया था — उनके कुछ महत्वपूर्ण वैचारिक, संस्मरणात्मक ग्रंथ आज विश्व की विरासत हैं. उनमें से कतिपय हैं :

* Kali the Mother
* The Web of Indian Life
* The Master as I saw him
* Myths of the Hindus & Buddhists

विश्व-परिवार के हम सभी सदस्य अनुग्रहीत हैं कि

शेष पृष्ठ ५६... पर

आइने से एक क़दम आगे... 'भट्टी में पौधा'

✍ सीमा जैन

भट्टी में पौधा (कहानी संग्रह) **– कमल चोपड़ा**
प्रकाशक - वाणी प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली-११०००२.
मूल्य - ३९५/-

'भट्टी में पौधा' कमल चोपड़ा जी का कहानी संग्रह है. सोलह कहानियों से सजा ये संग्रह जीवन के संघर्ष, दर्द, व्यवस्था से उपजी निर्दयता, समाज के दो वर्गों के बीच एक लंबे फ़ासले, सांप्रदायिकता (जो लेखक का प्रिय विषय है, साथ ही देश की सबसे बड़ी ज़रूरत भी.) की बात कहता है.

कमल जी का यह संग्रह उनकी अद्भुत लेखन शैली का एक शानदार तोहफ़ा है. साहित्य को एक दिशा दिखानी हो तो दशा का मार्मिक, सजीव चित्रण ज़रूरी है. जो पाठक को कुछ सोचने पर मज़बूर करे! कुछ परिवर्तन के लिए उकसाये.

'भट्टी में पौधा' इस प्रयास में पूरी तरह से सफल हुआ है. हर कहानी का प्रवाह, भाषा इतनी सरल व सीधी है कि लगता है ये सब लेखक ने देखा है इसीलिए वे इतना जीवंत चित्रण कर पाये.

उनके पात्र कहीं भी रचे हुए नहीं लगते है. वो कहानी में जीते हैं. सांस लेते हैं. साथ ही हमें एक अहसास, एक चलचित्र-सा दिखाते हैं. हमें लगता है कि सब कुछ हमारे सामने ही घट रहा है. हम भी उन पात्रों के साथ भट्टी की तपन महसूस करते हैं.

सबसे अंतिम कहानी जिसकी छाप अभी मेरे मन में सबसे ताज़ा है. 'भट्टी में पौधा' एक पौधे को भट्टी में डाल दें तो उसका क्या हाल होगा? वैसा ही कुछ हाल निम्नवर्ग का है. शोषण की पराकाष्ठा! जिसे पढ़कर मेरा मन पिघल गया. ग़रीब का जीवन कितना दुष्कर है?

पेटभर रोटी के लिए उसका जीवन किन-किन रास्तों से गुज़रता है. जिसमें ज़रूरी आवश्यकता के लिए भी पैसे नहीं? पैर के अंगूठे से घाव का दर्द, जूते की चाह का इतना मार्मिक व सजीव वर्णन है कि मन तड़फ उठता है. व्यवस्था से ये सवाल भी करता है कि किसी की तिजोरी में किसी की रोटी भी क़ैद हो गयी? कुछ लोग कितनों की ख़ुशियां निगल गये? यह कैसी खाई है जो पटती नहीं?

अब पहली कहानी की बात करें तो कमल जी का पसंदीदा विषय है, सामाजिक सौहार्द! घर में कन्या की पूजा में एक कन्या का कम होना, किसी एक अनजान प्यारी सी बच्ची का आना, दंपति का अपनी मज़बूरी के बावजूद कन्याओं को ग्यारह रुपये देना. इस पूजा को हम भी देख रहे थे कि अचानक पता चलता है कि नवीं कन्या 'नसीम' है.

बस यही कमल जी की कलम का एक सुंदर रूप सामने आता है : 'ईश्वर जातियों में भेद नहीं करते. मां की नज़र में सब एक हैं, यह मां ने कहा पर ख़ूबसूरती तो यह है कि एक ही पल में उस दंपति ने इसे समझ भी लिया.

आज हमारे समाज को इसी व्यापक सोच की ज़रूरत है. वो सोच, वो शब्द, सुनहरे हो जाते हैं जो समाज, देश के उत्थान की बात करते हैं. कमल जी की अधिकतर कहानियां प्रतिष्ठित पत्रिकाओं या समाचार पत्रों में स्थान पा चुकी हैं. ये लेखक की साहित्यिकी सफलता व मौन साधना का एक सुंदर उदाहरण है.

'गंदे' एक सवाल के साथ अपनी बात कहती है पर अंत बहुत सशक्त है. यह किस समाज में हम रह रहे हैं? एक औरत के साथ बलात्कार हो जाये तो वो गंदी हो जाती है? जिसने ज़ुल्म किया उसे सज़ा, उसका बहिष्कार हो! जिस पर अत्याचार हुआ उसके प्रति हमदर्दी हो. हम उसका सहारा बनें. होना तो यही चाहिए, पर होता यह है कि ज़ुल्मी से कोई कुछ सवाल नहीं करता है.

जिसने ज़ुल्म सहा वो ही कठघरे में खड़ा हो जाता है. मर्द ने औरत पर ज़ुल्म करके भी उसे ही अपवित्र ठहरा दिया इसका अफ़सोस नहीं है. अफ़सोस तो यह है कि हमने उसे माना, उसके ज़ुल्म को सर-माथे से लगाकर औरत को ही बुरा कहा.

बड़ी अज़ीब बात है 'उसकी इज़्ज़त चली गयी' ह इसके हिमायती हैं. लेखक ने इस सोच पर एक ज़बरदस्त वार करते हुए दोषी को सड़क पर पिटवाया है व नायिका गर्व से आगे बढ़ जाती है.

'आड़' इन दोनों (हिंदू-मुसलमान) समुदायों के रहन-सहन, रीति-रिवाज़ में कितने भी फासले हों, इनके दिल हमेशा एक दूसरों के पास ही रहे हैं. इनके दिलों में दूरियों का कार्य व्यवस्था की एक शर्मनाक ज़रूरत रही है. जिसको पद, पैसे ने हमेशा अपने नफ़े के लिए तार-तार किया है. मंदिर को मौलवियों ने पूजा है व पंडितों ने अजान भी लगायी है.

एक गाय के बछड़े को लेकर एक चौधरी किस कदर गिर सकता है? यहां जाति का ज़िक्र करना बहुत दुखद लगता है पर क्या करें? यहां कुछ स्वार्थी लोगों की निम्न हरकत के कारण पूरी कौम पर एक प्रश्न चिन्ह लग जाता है. चौधरी की अमानवीयता की हद है जो वो गाय के कान व पूंछ काटकर मंदिर में फिंकवा देता है. इस कहानी का यह अद्भुत सौंदर्य है कि पंडित मना कर देता है कि 'मंदिर में किसी ने गाय के कान और पूंछ फेंके हैं.'

ग़रीब (मुस्लिम) के अंदर की दया तो देखिए कि वो चौधरी को इस सारी फ़साद के बावजूद रुई के फाहे–सा सफ़ेद, नवजात बछड़ा भेंट करता है. दर्द, ज़्यादती, डर को सहने के बाद भी उसके मन में मैल नहीं आया वो चौधरी के घर उस बछड़े को भेंट देने जाता है.

कहानी का इतना सुंदर, सुखद, मानवीय, सामाजिक सौहार्द से भरा अंत, लेखक का देश की भिन्नता में एकता की बुलंद सोच को उजागर करता हुआ अपने आपको बहुत सशक्त तरीक़े से स्थापित करता है.

प्रेम, इंसानियत के संदेश से भरी ये सब कहानियां एक सुंदर समाज की चाहत रखती हैं. समस्याओं को उठाता, उनके सकारात्मक हल को हमारे सामने प्रस्तुत करता यह कहानी संग्रह भारत की एकता, अखंडता की जोत जलाता है.

सोलह चलचित्रों से बना यह कहानी संग्रह समाज का आईना तो है ही पर उसके आगे एक क़दम और बढ़ाता है — मानवीयता, बेहतर कल की आस से भरा यह एक सजीव कहानी संग्रह है.

२०१, संगम अपार्टमेंट, माधव नगर (विजय नगर), ग्वालियर-४७४००७.
मो. : ९८२६५११०३३

किसान संघर्ष का एक भूला-बिसरा योद्धा क्रांतिवीर मदारी पासी

गोविंद सेन

क्रांतिवीर मदारी पासी (उपन्यास) **— बृजमोहन**
प्रकाशक - रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
मूल्य - २००/–

इतिहास के अंधेरे में अनेक क्रांतिवीरों की गाथाएं छिपी हैं. वंचितों को हमेशा इतिहास ने उपेक्षित किया है. इनकी विजय गाथा इतिहास में प्रमुखता से दर्ज नहीं की गयी.

ऐसे ही एक क्रांतिवीर मदारी पासी को बृजमोहन जी ने अपने उपन्यास में सजीव कर दिया है. गहन शोध और अपने लेखकीय कौशल के जरिए मोहनजी ने इतिहास की टूटी कड़ियों को जोड़कर क्रांतिवीर मदारी पासी के आरोह–अवरोह कोई ईमानदारी से चित्रित किया है.

जब कोई कथाकार अपने कथ्य के लिए कोई ऐतिहासिक पृष्ठभूमि चुनता है तो उसके कंधों पर दोहरी ज़िम्मेदारी आ जाती है. पहली चुनौती तो यह कि उस विशिष्ट देश-काल की स्थिति और वातावरण का निर्माण और दूसरी संबंधित ऐतिहासिक तथ्यों को तौलकर उन्हें कथ्य में पिरोना. इस उपन्यास से ग़ुजरकर लगा कि इन दोनों ज़िम्मेदारियों का कुशल और अनुभवी कथाकार बृजमोहन जी ने बख़ूबी निर्वाह किया है.

'क्रांतिवीर मदारी पासी' किसान संघर्ष के एक भूले-बिसरे योद्धा की महागाथा है. ब्रिटिश काल में शोषित किसान मजदूरों के हितचिंतक मदारी पासी ने ज़मींदारों के खिलाफ एक अत्यंत प्रभावकारी 'एका आंदोलन' खड़ाकर के क्रांति की थी. इस आंदोलन ने किसानों और मजदूरों का शोषण करनेवाले ज़मींदारों का पुरजोर प्रतिरोध तो किया ही, अंग्रेज़ों के दमनचक्र का भी बख़ूबी सामना किया.

एका आंदोलन के जरिए जननायक मदारी पासी ने कोरी, चमार, पासी, खटीक, बहेलिया, काछी, कहार, नाई, धोबी, डोम, जुलाहा, मनिहार आदि सभी नीची जातियों को एक सूत्र में बांधा और उनमें चेतना जागृत की. इस आंदोलन में जाति और धर्म का भी कोई बंधन नहीं था. सताए हुए कुछ ज़मींदार, ब्राह्मण और मुस्लिम भी एका आंदोलन में शामिल थे. उनकी कथा में पंडित और मौलवी

लघुकथा

छोटी सी चिड़िया

गोवर्धन यादव

'रामदीन...जरा बड़े बाबू को मेरे कमरे में भिजवाना'. बड़े साहब ने चपरासी को हुक्म बजा लाने को कहा.

'मे आई कम इन सर', बड़े बाबू ने कमरे में प्रवेश करने के पहले कहा.

'हां, तुम अंदर आ सकते हो', साहब ने कहा.

'देखो, मुझे बात घुमा-फिराकर कहने की आदत नहीं है. एक हफ़्ते के अंदर मुझे पचास हज़ार रुपये चाहिए. इसका इंतजाम कैसे हो सकता है,वह तुम जानो.'

'बिल्कुल हो जायेगा सर. आप चिंता न करें.'

बड़े बाबू अपनी कुर्सी पर आकर बैठ गये. उन्होंने अपनी मेज की ड्रॉज से कोरे काग़ज निकाले, टाइपराइटर में फंसाये और एक लेटर टाइप किया और साहब के कमरे में जा पहुंचे.

'यह क्या है?' साहब ने कहा.

'कुछ नहीं हुजूर. यह एक छोटा–सा कागज़ का पुर्जा है.

'बड़े बाबू, तुम्हारा दिमाग़ ख़राब तो नहीं है. तुम जानते हो कि बीच सेशन में किसी का ट्रान्सफ़र नहीं किया जा सकता.'

'हुजूर जानता हूं. प्यारेलाल इसी शहर में कई बरस से कुंडली मारे बैठा है. फिर उसकी बीवी भी सरकारी नौकरी में है. फिर हमने उसका ट्रान्सफ़र थोड़े ही किया है. उसे तो हमने प्रमोशन दिया है. मैं जानता हूं वह इतनी दूर नहीं जायेगा. ऑर्डर मिलते ही वह सिर पर पैर रखकर दौड़ा चला आयेगा. और हमें मनचाही रक़म दे जायेगा. बस आप इस कागज़ पर अपनी छोटी सी चिड़िया बिठा दीजिए और देखिए यह चिड़िया क्या कमाल दिखाती है'.

'समझ गया. तुम बहुत ही होशियार आदमी हो'.

'सर, ऐसी बात नहीं है. मैं तो आपका सेवक हूं और आपकी सेवा करना ही मेरा धर्म है'.

१०३, कावेरीनगर, छिंदवाड़ा (म. प्र.) ४८०००१ मो. :९४२४३५६४००
Email : goverdhanyadav44@gmail.com

दोनों रहते थे. उनकी एकजुटता का प्रयास जातिया धर्म आधारित नहीं था. वे वर्ग चेतना पर जोर देते थे.

यह आंदोलन एक सुविचारित आंदोलन था और इसे जनभावनाओं के अनुरूप कुशलता से खड़ा किया गया था. कथा, सभा और जयघोष जननायक मदारी पासी के मौलिक अस्त्र-शस्त्र थे. कथा और सभा के जरिए किसानों और मज़दूरों को अपनी रणनीति से अवगत कराया जाता था और एका रखने को प्रेरित किया जाता था क्योंकि इसी से उनकी शोषण और प्रताड़ना से मुक्ति संभव थी. वे अपनी इस रणनीति के क्रियान्वयन में बेहद सफल रहे.

क्रांतिवीर मदारी पासी का जन्म १८६० आंका गया है. उनका जन्म हरदोई जिले के एक गांव मोहनखेड़ा में एक ग़रीब किसान के घर हुआ था. उनके पास कोई शैक्षणिक प्रमाणपत्र नहीं था, पर उन्हें हिंदी-उर्दू का ज्ञान था. वे दूसरों को उर्दू पढ़ाया करते थे. १९३० में मदारी पासी का निधन हुआ. क़रीब ७० साल वे जीवित रहे.

उपन्यास २७ अध्यायों में बांटा गया है. ये अध्याय आपस में सुसंगत रूप से जुड़े हुए हैं. गाथा १५० पृष्ठों तक फैली है. पढ़ते हुए कहीं भी बोझिलता महसूस नहीं होती. जिज्ञासा बनी रहती है और कथा खुलती चली जाती है. पाठकों को एक ऐतिहासिक महागाथा पढ़ने का सुख मिलता है. बृजमोहनजी ने तथ्यों का अनुसंधानकर उन्हें भलीभांति इस तरह जोड़ा है कि कृति सजीव हो उठी है. इस तरह का काम बहुत मेहनत मांगता है. यहां उनके लेखकीय कौशल की दाद देनी पड़ेगी कि यथार्थ और कल्पना को मिलाकर उन्होंने क्रांतिवीर मदारी पासी की एक मुकम्मल और सजीव तस्वीर खड़ी कर दी.

बृजमोहनजी की भाषा सहज, सरल, सुबोध, चित्रात्मक, पात्रानुकूल और पारदर्शी है. उपन्यास में अनेक स्थानों पर जनजीवन और प्रकृति के जीवंत प्रमाण मिलते हैं. यथा स्थान असहयोग आंदोलन, चौरा-चोरी कांड, का कोरीकांड आदि के प्रसंग मिलते हैं. गदर के सेनानी गोकरन पासी और भगतसिंह के सहयोगी शिववर्मा का भी यहां प्रसंग आया है. कुल मिलाकर यह बृजमोहनजी का एक महत्वपूर्ण काम है और इससे उनके लेखकीय व्यक्तित्व को एक नयी ऊंचाई मिलती है. मुद्रण की त्रुटियां नगण्य हैं. पुस्तक की छपाई सराहनीय है.

राधारमण कॉलोनी, मनावर,
जिला-धार (म. प्र.)

गंभीरता से नहीं लिया जाता.

हिंदी समीक्षा से जुड़ी विडंबनाओं में से एक यह भी है. दूसरी भारतीय भाषाओं में ऐसा नहीं है, बल्कि उन भाषाओं में बाल-साहित्य से जुड़ी अच्छी रचनाओं को अतिरिक्त सम्मान के साथ देखा जाता है, क्योंकि बच्चों के लिए लिखना, बड़ों के लिए लिखने की अपेक्षा काफ़ी मुश्किल काम माना है. दुनिया में जब तक आदमी बच्चे के रूप में जन्म लेता रहेगा, बच्चों के साहित्य की उपयोगिता, उसका महत्व हमेशा बना रहेगा. बच्चों में मां-बाप और परिवार के अलावा साहित्य ही है, जो संस्कार के बीज डालने का काम करता है. सूरदास ने बाल-कृष्ण की बाल-लीलाओं को लेकर बहुत सारे पद लिखे हैं जो हमारे कालजयी साहित्य की अनमोल धरोहर हैं. यह अजीब बात है कि पूरी दुनिया बच्चों को प्यार करती है, उनकी बाल-लीलाओं पर मुग्ध होती है, लेकिन उनके लिए लिखे गये साहित्य को हिंदी समीक्षक उपेक्षा से देखता है, उसे उल्लेखनीय नहीं समझता. हिंदी समीक्षा को अपने जिन पूर्वाग्रहों से अभी ऊपर उठना है, अपना 'आई टेस्ट' करवाना है, उनमें से एक यह भी है.

▸ साहित्य की केंद्रीय विधा आपकी दृष्टि से गद्य है या पद्य?

बहुत बढ़िया और सटीक प्रश्न है, लेकिन इसके लिए जरा विस्तार में जाये बिना बात बनेगी नहीं. मेरी दृष्टि से तो साहित्य की केंद्रीय विधा सिर्फ़ कविता ही हो सकती है. कविता कवि के कहीं अंदर, बहुत अंदर घटित होती है, किसी चमत्कार की तरह, कवि के अंदर, अवतरित होती है. उसके इस तरह अचानक स्फुरित होने का कोई स्थूल तर्क ऊपरी तौर पर समझ में नहीं आता. कवि चाहे अथवा न चाहे, कविता उसके अवचेतन से चेतन में छनकर, किसी भी पल काग़ज़ पर उभरना शुरू कर देती है. कविता का संबंध कवि की पूरी अंतर्रात्मा से होता है. शायद इसीलिए संस्कृत के महाकवि भवभूति ने कविता को आत्मा की कला कहा है.

कविता सूर्य मंत्र की तरह, अवचेतन से चेतन की, अंधेरे से उजाले की एक रहस्य-यात्रा है. जबकि गद्य की रचना-प्रक्रिया कविता के ठीक विपरीत है. उसमें हम खुली आंखों से जो दुनिया देखते हैं, उसी के लौकिक अनुभव कथा या उपन्यास में विभिन्न पात्रों के रूप में काग़ज़ पर आकार लेते हैं. वे कविता की तरह, एक रहस्यमय ढंग से अलौकिक, अनुभव से गुज़र कर काग़ज़ पर नहीं उतरते. आपने देखा होगा कि कोई गद्य कृति चाहे कितनी ही अच्छी क्यों न हो उसे दोबारा पढ़ने की ललक शायद ही आपके मन में कभी उठती है. जबकि अच्छी कविता पढ़ने का बार-बार मन करता है. कविता का रस कभी सूखता नहीं. वह हमेशा ताज़ा रहती है. इसके अतिरिक्त यह ख़ूबी भी कविता में है जो कि संदेश, जो बात कविता दो/चार पंक्तियों में ही व्यक्त कर देती है गद्य में उसके लिए कई पंक्तियों की ज़रूरत होती है. कई बार तो पूरी पुस्तक ही लग जाती है.

प्रख्यात कथाकार कृष्णा सोबती ने भी एक पत्रिका को दिये अपने एक साक्षात्कार में कविता का स्थान गद्य से ऊपर बताते हुए कहा है कि गद्यवालों को ईमानदारी से मान लेना चाहिए कि वे नंबर दो पर हैं. नंबर एक पर कवि का स्थान है. प्रख्यात शायर फिराक गोरखपुरी भी अपने एक शेर में इसी बात की पुष्टि करते नज़र आते हैं कि कविता ही साहित्य की केंद्रीय विधा हो सकती है. उनका शेर है —

"हम शायरों को छोड़कर थी जिनकी धूमधाम,
दुनिया को याद आ न सके, उनके नाम भी।"

▸ लेकिन संस्कृत में गद्य को कवि का निकष माना गया है. इस पर आपका क्या कहना है?

जब किसी गद्यकार की कसौटी कविता नहीं है, तो फिर कवि की कसौटी गद्य को क्यों माना जाना चाहिए? आम तौर पर, साहित्य में देखा तो यही गया है कि अधिकांश गद्यकारों ने अपने लेखन की शुरूआत कविता से की और इसमें नाकाम होने के बाद गद्य की ओर मुड़ गये. जबकि कई लोग कविता में असफल होने के बाद ही आलोचक बनते हैं. और इस समय तमाम भारतीय भाषाओं में हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसका आलोचक स्वयं को कविता का 'गॉड फ़ादर' या .....

('चिंतन दिशा' से साभार)

✍ २ मानकू मेंशन
सदानंद मोहन जाधव मार्ग,
दादर (पूर्व), मुंबई-४०००१४.
मो. : ९९६९४७१५१६

(पृष्ठ ५२ से आगे....)

हमें ऐसी 'भगिनी' का आशीर्वाद मिला जो मां भी थी, पुत्र भी, संगिनी भी थी और नेता भी!

✍ ६०१–ए, रामकुंज को. हॉ. सो.,
रा. के. वैद्य रोड, दादर (प.),
मुंबई-४०००२८.
मो.:९८२०२२९५६५.
ई-मेल : pillai.rajam@gmail.com

आपके अपने पुस्तकालय के लिए ज़रूरी पुस्तकें

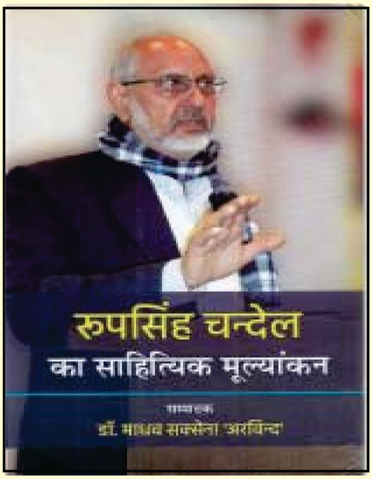

रूपसिंह चन्देल
का साहित्यिक मूल्यांकन

: सम्पादक :
डॉ. माधव सक्सेना *"अरविंद"*

अमन प्रकाशन,
१०४-ए/ ८० सी रामबाग,
कानपुर-२०८०१२.
ई-मेल :
amanprakashan0512@gmail.com

मूल्य : ७२५ रु.
पृष्ठ : ३३६

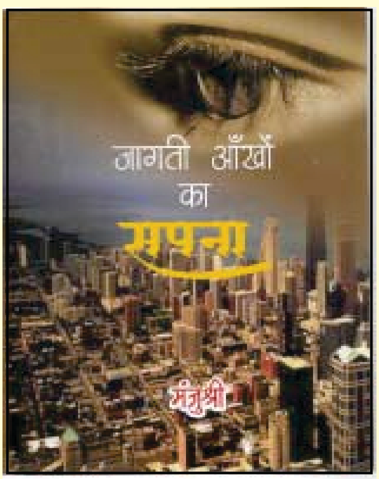

जागती आँखों का सपना
(कहानी-संग्रह)

लेखिका :
मंजुश्री

: प्रकाशक :
नीरज बुक सेंटर,
सी-३२, आर्यनगर सोसायटी, प्लॉट-९१,
आई. पी. एक्सटेंशन, दिल्ली-११००९२.
ई-मेल : bhavna_pub@rediffmail.com

(२० प्रतिशत छूट का लाभ उठायें.)

मूल्य : ३९५ रु.
पृष्ठ : १४४

आर. एन. आई. पंजीकरण संख्या :३५७६४/ ७९

आपके नये घर का सपना साकार किजियें, अब महासुपर आवास ऋण योजना के साथ

Build your dream castle with Mahasuper Housing Loan scheme

महा सुपर आवास ऋण

- ऋण राशि की कोई अधिकतम सीमा नहीं
- आयु सीमा– 65 वर्ष
- पुर्नभुगतान अवधि 30 वर्ष तक
- आकर्षक ब्याज दरें
- कोई छिपे हुए प्रभार नहीं
- 10 लाख तक का उपभोक्ता ऋण

MAHA SUPER HOUSING LOAN

- No Upper Limit of Loan Amount
- Age limit upto 65 years
- Repayment period up to 30 years
- Attractive Interest Rates
- No Hidden Charges
- Consumer Loan upto Rs. 10 lakhs

ऋण अनुरोध हेतु 56161 पर SMS भेजें : BOM<space>HOME<space>अपने शहर का नाम

To apply for Loan, send SMS on 56161 as BOM<space>HOME<space>Name of your City

अधिक जानकारी के लिए कृपया अपनी निकटतम शाखा से संपर्क करें *Please contact Nearest Branch for more details*

*नियम व शर्तें लागू

बैंक ऑफ महाराष्ट्र
Bank of Maharashtra
भारत सरकार का उद्यम

एक परिवार एक बैंक

*T&C Apply

टोल फ्री क्रं.: 1800-233-4526 | वेबसाइट : www.bankofmaharashtra.in | नेट बैंकिंग: https://www.mahaconnect.in

अपने इंटरनेट बैंकिंग की जानकारी तथा यूजर आई–डी/पासवर्ड या अपने क्रेडिट/डेबिट कार्ड का क्रमांक/सीवीवी/ओटीपी किसी को भी फोन या ई–मेल के माध्यम से साझा न करें.

Do not share your internet banking details, such as, user ID / Password or your Credit / Debit card number / CVV / OTP with anyone, either over phone or through email.

संपर्क सूत्र : ए-१०, बसेरा, ऑफ दिन-क्वारी रोड, देवनार, मुंबई-४०० ०८८

मंजुश्री द्वारा संपादित व पिकॉक प्रिंट्स, बिल्डिंग नं.-1 के पीछे, अंबेडकर सर्किल, पंतनगर, घाटकोपर, मुंबई-400 075 में मुद्रित.
टाईप सेटर्स : वन अप प्रिंटर्स, 12वां रास्ता, द्वारका कुंज, चेंबूर, मुंबई-400 071. फोन : 25515541